(देश देशान्तरों में प्रचारित, उच्च कोटि का अध्यात्मिक मासिक-पत्र)

वार्षिक मू० २)

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक का लाई।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई॥

एक अंक ≈)

सम्पादक—पं० श्रीराम शर्मा आचार्य, सहा० सम्पा०—प्रो० रामचरण महेन्द्र एम० ए०

वर्ष ७ | मथुरा, १ अक्टूबर सन् १९४६ ई० | अंक १०

परोपकार जीवन का सब से बड़ा लाभ है !

"मैंने इतना किया पर इसका बदला मुझे क्या मिला ?" ऐसे विचार करने की उतावली न कीजिये। बादलों को देखिये वे सारे संसार पर जल बरसाते फिरते हैं, किसने उनके अहसान का बदला चुका दिया ? बड़े-बड़े भूमि खण्डों का सिंचन करके उनमें हरियाली उपजाने वाली नदियों के परिश्रम की कीमत कौन देता है ? हम पृथ्वी की छाती पर जन्म भर लदे रहते हैं और उसे मल मूत्र से गन्दी करते रहते हैं, किसने उसका मुआविजा अदा किया है ? वृक्षों से फल, छाया, लकड़ी पाते हैं, पर उन्हें हम क्या कीमत देते हैं ?

परोपकार स्वयं ही एक बदला है। त्याग करना अजनबी आदमी को एक घाटे का सौदा प्रतीत होता है, पर जिन्हें उपकार करने का अनुभव है वे जानते हैं कि ईश्वरीय वरदान की तरह यह दिव्य गुण कितना शान्ति दायक है और हृदय को कितना बल प्रदान करता है। उपकारी मनुष्य जानता है कि मेरे कार्यों से कितना लाभ दूसरों को होता है, उससे कई गुना अधिक स्वयं मेरा होता है।

त्याग करना, किसी की कुछ सहायता करना, उधार देने की एक वैधानिक पद्धति है, जो कुछ हम दूसरों को देते हैं, वह हमारी रक्षित पूंजी की तरह परमात्मा की बैंक में जमा हो जाता है। जो अपनी रोटी दूसरों को बांट कर खाता है, उसको किसी बात की कमी न रहेगी। जो केवल खाना और जमा करना ही जानता है, उस अभागे को क्या मालूम होगा कि त्याग में कितना मिठास छिपा हुआ है।

ब्रह्मचर्य का तत्व ज्ञान।

(महात्मा गांधी)

हम लोगों ने ब्रह्मचर्य की व्याख्या को केवल स्थूल रूप दे दिया और जो लोग प्रतिक्षण क्रोध करते रहते हैं, उन्हें दोषी मानना छोड़ दिया है। जिस प्रकार स्थूल ब्रह्मचर्य का पालन शरीर-सुख के लिये आवश्यक है, उसीप्रकार आध्यात्मिक ब्रह्मचर्य की भी आवश्यकता है।

ब्रह्मचर्य का अर्थ है मन, वचन और काया से समस्त इन्द्रियों का संयम।... जबतक अपने विचारों पर इतना कब्जा न हो जाय कि अपनी इच्छा के बिना एक भी विचार न आने पावे, तब तक वह सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य नहीं। जितने भी विचार हैं वे सब एक तरह के विकार हैं। उनको वश में करने के मानी हैं मन को वश में करना और मन को वश में करना वायु को वश में करने से भी कठिन है। इतना होते हुए भी यदि आत्मा कोई चीज है तो फिर यह भी साध्य होकर रहेगा।

ब्रह्मचर्यहीन जीवन मुझे शुष्क और पशुवत् मालूम होता है। पशु स्वभावतः निरंकुश है, परन्तु मनुष्यत्व इसी बातमें है कि मनुष्य स्वेच्छा से अपने को अंकुश में रक्खे। ब्रह्मचर्य की जो स्तुति धर्म-ग्रन्थों में की गई है उसमें पहले मुझे अत्युक्ति मालूम होती थी। परन्तु अब दिन दिन यह अधिकाधिक स्पष्ट होता जाता है कि वह बहुत ही उचित और अनुभव सिद्ध है।

'विषय मात्र का निरोध ही ब्रह्मचर्य है।'

...सत्याग्रह-सेनापति के शब्द में ताकत होनी चाहिये—वह ताकत नहीं जो असीमित अस्त्र-शस्त्रों से प्राप्त होती है, बल्कि वह जो जीवन की शुद्धता, दृढ जागरूकता और सतत आचरण से प्राप्त होती है। वह ब्रह्मचर्य का पालन किये बगैर असम्भव है। ब्रह्मचर्य का अर्थ यहां खाली दैहिक आत्म संयम या निग्रह ही नहीं है। इसका तो इससे कहीं अधिक अर्थ है। इसका मतलब है सभी इन्द्रियों पर पूर्ण नियमन। इस प्रकार अशुद्ध विचार भी ब्रह्मचर्य का भङ्ग है और यही हाल क्रोध का है। सारी शक्ति उस वीर्य शक्ति की रक्षा और ऊर्ध्वगति से प्राप्त होती है जिसमें कि जीवन का निर्माण होता है। अगर इस वीर्य-शक्ति का, नष्ट होने देने के बजाय, संचय किया जाय तो यह सर्वोत्तम सृजन-शक्ति के रूप में परिणत हो जाती है। बुरे या अस्त-व्यस्त, अव्यवस्थित, अवांछनीय विचारों से भी इस शक्ति का बराबर और अज्ञात रूप से क्षय होता रहता है और चूंकि विचार ही सारी वाणी और क्रियाओं का मूल है इसलिये वे भी इसी का अनुकरण करती हैं। इसीलिये पूर्णतः नियन्त्रित विचार खुद ही सर्वोच्च प्रकार की शक्ति है और स्वतः क्रियाशील बन सकता है। मूक रूप में की जाने वाली हार्दिक प्रार्थना का मुझे तो यही अर्थ मालूम पड़ता है। अगर मनुष्य ईश्वर की मूर्ति का उपासक है तो उसे अपने मर्यादित क्षेत्र के अन्दर किसी बात की इच्छा भर करने की देर है, जैसा वह चाहता है वैसा ही बन जाता है जिस तरह चूने वाले नल में भाफ रखने से कोई शक्ति पैदा नहीं होती, उसी प्रकार जो अपनी शक्ति का किसी भी रूप में क्षय होने देता है उसमें इस शक्ति का होना असम्भव है।

"...ब्रह्मचारी रहने का यह अर्थ नहीं कि मैं किसी स्त्री को स्पर्श न करूं, अपनी बहिन का स्पर्श न करूं। ब्रह्मचारी होने का अर्थ यहहै कि स्त्री का स्पर्श करने से किसी प्रकार का विकार न उत्पन्न हो जिस तरह कि कागजको स्पर्श करने से नहीं होता। मेरी बहिन बीमार हो और उसकी सेवा करते हुए, उसका स्पर्श करते हुए ब्रह्मचर्य के कारण मुझे हिचकना पड़े तो वह ब्रह्मचर्य तीन कौडी का है। जिस निर्विकार दशा का अनुभव हम मृत शरीर को स्पर्श करके कर सकते हैं उसी का अनुभव जब हम किसी सुन्दरी युवती का स्पर्श करके कर सकें तभी हम ब्रह्मचारी हैं।

मुझे यह बात कहनी ही होगी कि ब्रह्मचर्य व्रत का तब तक पालन नहीं हो सकता जब तक कि ईश्वर में, जो कि जीता जागता सत्य है, अटूट विश्वास न हो।

———

मथुरा, १ अक्टूबर सन् १९४६ ई०

आत्म रक्षा का उपाय।

आज देश का वातावरण बड़ा क्षुब्ध और अशान्त है। द्वितिय महायुद्ध के दिनों में भय और आशङ्का का वातावरण रहता था। पर चूंकि युद्ध क्षेत्र दूर था और इसलिए बहुत अधिक व्याकुलता नहीं थी और सामूहिक आक्रमण होने पर उससे बचने के सामूहिक उपायों का ढाढस था आज उससे भिन्न अवस्था है। "फूट डालो और लूट खाओ" की साम्राज्यवादी नीति ने साम्प्रदायिक मतभेद इस देश में पैदा किये और विभिन्न तरीकों से उन्हें प्रोत्साहित किया। आज वह विष बेलि बढते बढते चारों ओर छागई है। राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं की अभीष्ट सिद्धि करने के लिए अगुआ लोग तनातनी और कटुता को बढाते ही जा रहे हैं। इस अवांछनीय स्थिति के कारण साम्प्रदायिक वैमनस्य बढता जा रहा है। एक वर्ग जब निरन्तर घृणा, कटुता, उत्तेजना, द्वेष, उगले तो दूसरा वर्ग कितना ही शान्तिप्रिय क्यों न हो उसकी प्रतिक्रिया से वंचित नहीं रह सकता। ढेला फेंकने पर शान्त तालाब में भी लहरें उठने लगती हैं। कूए की आवाज के समान मनुष्य स्वभाव भी क्षोभवान् है। दूसरों के व्यवहार की प्रतिक्रिया से उत्तेजना उत्पन्न होने से मनुष्य अपने आपको बचा नहीं सकता। दूसरों के दुर्व्यवहारों से जो कष्ट और क्लेश मिलता है उससे बचने के लिए आत्मरक्षा की दृष्टि से भी दुर्व्यवहारों के विरोध में कुछ न कुछ उपाय करना पड़ता है। आक्रमण की प्रतिक्रिया भी होती है, कुचल जाने पर चींटी भी काटने को तैयार होजाती है।

हिन्दू-मुसलिम समस्या नाम की वास्तव में कोई समस्या नहीं है। भारतवर्ष में सैकड़ों जातियां बसती हैं। इनमें आपसी रोटी बेटी के व्यवहार नहीं हैं, एक दूसरे से छूतछात भी मानती है हिन्दू धर्म में अनेकों परस्पर विरोधी रीति रिवाज, विचार एवं मान्यताएं प्रचलित हैं फिर भी सब आपस में परस्पर प्रेम पूर्वक सदियों से साथ साथ रहते हुए चले आरहे हैं। सैकड़ों जातियां उप जातियां, सम्प्रदाय, मत मतान्तर, भाषा, भेष आदि का होना कभी कलह या प्रथकता का कारण नहीं बना। महाराष्ट्र, पंजाब, बंगाल, मद्रास आदि के निवासियों में कई दृष्टियों से काफी अन्तर दिखाई पड़ता है पर उस अन्तर के कारण कोई किसी से न तो लड़ता झगड़ता है और न प्रथकता का दावा करता है। एक दूसरे को दुश्मन समझने और छोटी २ बातों की आड़ लेकर कोई किसी की जान का ग्राहक नहीं बनता। शान्तिप्रियता भारतीय संस्कृति का प्रधान अङ्ग है।

भारत के हिन्दू और मुसलमानों में एक ही रक्त है। एक ही जाति और एक ही वंश के हैं। धर्म या मजहब को बदल लेने मात्र से आज का भाई कल दुश्मन या विदेशी नहीं हो सकता। धर्म व्यक्तिगत रुचि की वस्तु है, उसे बदला जा सकता है पर इतने मात्र से उस प्रकार की प्रथकता के के दावे नहीं किये जासकते जैसे कि लीगी नेता आज कल कर रहे हैं।

आज के युग में कूटनीति का बोल बाला है। अपनी मनमानी करने के लिए चाहे जिस पर चाहे जैसे इल्जाम लगाकर सीधी साधी जनता को भड़का

विद्वेष और घृणा उत्पन्न करना और उन परिस्थितियों से लाभ उठाकर खुद नेता बन बैठना ही आज की राजनीति का वेढब जादू है। इस जादूगरी ने सीधे साधे लोगों को दिक् भ्रम करा दिया है। भाई भाई को दुश्मन मान बैठा है। एक दूसरे का गला काटने के लिए अकारण कटिबद्ध हो रहा है।

विगत कई वर्षों से साम्प्रदायिक दङ्गों का जोर बढ़ा है। अभी हाल में अहमदाबाद, इलाहाबाद, कलकत्ता, बम्बई, ढाका आदि में जो दङ्गे हुए हैं, उनके रोमांचकारी वृत्तान्तों को सुनकर कलेजा कांप जाता है। निर्दोष बालकों, वृद्धों महिलाओं के साथ जो नृशंसता बरती गई उसे देखकर तो यही कहना पड़ता है, मनुष्य जाति पशुता से अभी बहुत कम ऊपर उठ सकी है। जो लोग इस प्रकार की पशुता भड़काते हैं, भड़काते हैं और उससे अपनी नेतागीरी को मजबूत बनाने जैसे नीच काम करते हैं उनको किन शब्दों में क्या कहा जाय यह समझ में नहीं आता।

घृणा और द्वेष का निरन्तर प्रचार और विस्तार करने वाले नेता चैन की छानते हैं और निर्दोष जनता को उसका घातक परिणाम भुगतना पड़ता है। कानून, लड़ने वालों को तो पकड़ता है पर लड़ाने वालों के विरुद्ध कुछ भी करने में अपने आपको असमर्थ पाता है। इस स्थिति को भारतीय जनता का दुर्भाग्य ही कह सकते हैं। भगवान इस दुर्बुद्धि से न जाने कब तक हमें पार करेंगे।

आज इस दुर्बुद्धि के कारण चारों ओर अशान्ति आशंका और भय का वातावरण छाया हुआ है। जिन नगरों में साम्प्रदायिक विद्वेष वृद्धि पर है वहां के शान्ति प्रिय लोगों को आकस्मिक विपत्ति की आशङ्का हर घडी बनी रहती है। मुसलिम लीग "सीधी कार्यवाही" के नाम पर लोगों से क्या कराने जा रही है इसका कुछ आभास तभीसे मिलने लगा है जब से लीगी नेता चंगेजखां को बधाई दे रहे हैं और 'अहिंसा' पर अविश्वास प्रकट कर रहे हैं। वर्तमान राजनैतिक घटना चक्र के कारण साम्प्रदायिक उपद्रवों की आशङ्का बहुत बढ गई है।

जनता की जानमाल को गुण्डागीरी के आक्रमण से बचावे यह सरकार का कर्तव्य है। पर साथ ही हमें स्वयं भी सतर्क, सावधान रहना चाहिए और आत्मरक्षा के लिए सभी शान्तिमय साधनों से अपने आपको प्रस्तुत रखना चाहिए। थोड़े से संगठित बदमाश, असङ्गठित विपुल जन समूह को आतंकित कर देते हैं। अक्सर दस पांच गुण्डे उपद्रव आरम्भ करते, उस उपद्रव को देखकर सब लोग भाग खड़े होते हैं, बाजार बन्द होजाते हैं और लोग अपने अपने घरों में भागकर छुप जाते हैं। इस भगदड़ का वे मुट्ठी भर बदमाश लाभ उठाते हैं और लूटमार, अग्निकाण्ड, हत्या आदि के मनमाने उपद्रव निधड़क होकर करते हैं। उन्हें इस प्रकार का खुला अवसर देने का बहुत कुछ दोष इन भगदड़ करने वालों पर भी है। इस भगदड़ का कारण आपस में एक दूसरे के सहयोग पर अविश्वास होना है। एक निर्दोष व्यक्ति सताया जा रहा हो तो उसकी सहायता करने की बजाय चुप रहने या भागने का विचार बहुत ही अनैतिक है। निर्दोष की सहायता करना और आक्रमणकारी को रोकना यह हर एक विचारवान् व्यक्ति का कर्तव्य है, बिना इस कर्तव्य को पालन किये सङ्गठित गुण्डागीरी को नहीं रोका जा सकता। इसलिए हर जगह इस प्रकार के सङ्गठन किये जाने चाहिए कि दूसरों की परवाह न करके केवलमात्र अपनी ही सुरक्षा की तरकीब सोचने की अपेक्षा सामूहिक सुरक्षा के लिए तत्पर रहेंगे। अपनी २ बात सोचने से कोई किसी की मदद को नहीं आता और सब पिटते हैं। सब के रक्षा में अपनी रक्षा मानने से सब के साथ २ खुद भी बच जाते हैं। अकेलेपन में जितनी हानि की आशंका है, सामूहिकता में वह बहुत कम हो जाती है।

प्रेम, सहयोग, सद्भाव, सङ्गठन सदा ही अच्छे होते हैं क्योंकि यह अध्यात्मिक गुण हैं। पर आजकल साम्प्रदायिक अशान्ति के दिनों में

दशऋत होकर नाम जपिए।

साधारण रीति से सभी राम नाम लेते रहते हैं पर उसका कोई विशेष फल नहीं होता। विधि पूर्वक राम नाम लेने से ही नाम महात्म्य का वास्तविक फल प्राप्त होता है। कहा भी है—

राम नाम सब कोई कहे, दशऋत कहे न कोय।
एक बार दशऋत कहे, कोटि यज्ञ फल होय॥

दशऋत के साथ राम नाम लेने से कोटियज्ञों का फल होना इस अभिवचन में माना गया है। ऋत कहते हैं दोषों को—दशों इन्द्रियों की कुवासनाओं को त्याग कर, चित्त को सदाचारी और सात्विक बना कर जब परमात्मा का नाम लिया जाता है तो उससे सच्चा लाभ प्राप्त होता है।

नाम जप करने वालों के लिए शास्त्रकारों ने दश नामापराध बताये हैं। और उनसे बचे रहने का कठोर आदेश किया है। जैसे औषधि सेवन के साथ साथ परहेज से रहना भी आवश्यक है उसी प्रकार नाम जप करने वालों को दस नामापराधों से बचना भी आवश्यक है। परहेज बिगाड़ने से, कुपथ्य करने से, अच्छी औषधि का सेवन भी निष्फल हो जाता है, उसी प्रकार नामापराध करने से नाम जप भी निष्फल चला जाता है। दशऋतों से—दश नामापराधों से-बचकर राम नाम जपने से कोटि यज्ञों का फल प्राप्त होता है। वे दश ऋत यह हैं:—

सान्निन्दासति नामवैभय कथा श्रीशेशयोर्भेदधी-
रश्रद्धा गुरु शास्त्र वेद वचने नाम्न्यर्थवादभ्रमः
नामास्तीतिनिषिद्ध वृत्ति विहित त्यागौहि धर्मान्तरैः
साम्यं नाम जपे शिवस्य च हरेर्नामापराधा दश।

(१) सन्निन्दा (२) असति नाम वैभव कथा (३) श्रीशेशयोर्भेदधीः (४) अश्रद्धा गुरु वचने (५) शास्त्र वचने (६) वेद वचने (७) नाम्न्यर्थवाद भ्रमः (८ नामास्तीति निषिद्ध वृत्ति (९) विहित त्याग (१० धर्मान्तरे साम्यम्. यह दश नामापराध या ऋत हैं। इनको त्यागने से नाम जप का कोटि यज्ञ फल प्राप्त होता है। इन दसोंका खुलासा नीचे किया जाता है।

(१) सत् निन्दा—सत् पुरुषों की, सज्जनोंकी सत्य की, सच्चे कार्यों की, सत् सिद्धान्तों की किसी स्वार्थ भाव से प्रेरित होकर निन्दा करना। सत्य पर चलने की, सत् सिद्धान्तों को अपनाने का किसी लोभ या भय से साहस न होता हो तो लोग अपनी कमजोरी छिपाने के लिए सत्य बातों का या सत् पुरुषों का ही किसी मिथ्या आधार पर विरोध करने लगते हैं, यह 'सन्निन्दा' है। शत्रु में भी सत्यता हो तो उस सत्यता की तो प्रशंसा ही करनी चाहिए।

(२) असति नाम वैभव कथा—असत्य के आधार पर बढ़े हुए व्यक्तियों या सिद्धान्तों के नाम या वैभव की प्रशसा करना। कितने ही झूठे, पाखण्डी अत्याचारी व्यक्तिअपनी धूर्तता के आधार पर बड़े कहलाने लगते हैं। उनकी चमक दमक से आकर्षित होकर उनकी प्रशसा करना या उनके वैभव का लुभावना वर्णन करना त्याज्य है। असत्य की सदा निन्दा ही की जानी चाहिए, झूठे आधार पर मिली हुई सफलताओं को इस प्रकार समझना

तो हमें इन्हें पूरी तरह चरितार्थ करके अपने जान माल की बचत कर सकते हैं और साम्प्रदायिक उपद्रव कारियों के आक्रमणों से बच सकते हैं। सामूहिक चौकीदारी, सामूहिक स्वयं सेवा, सामूहिक रक्षा के लिए सदा तत्परता यह सामूहिकता का आध्यात्मिक कार्यक्रम शीघ्र से शीघ्र हमारे व्यवहारिक जीवन में प्रयुक्त होना चाहिए। आत्म रक्षा की शिक्षा उसके उपयुक्त साधनों का सग्रह तो आवश्यक है ही पर सबसे आवश्यक और सर्व प्रधान सामूहिक सहयोग की भावना है उसे हमें बढाना चाहिए। इस संघ शक्ति की ढाल के नीचे से हम आततायी तत्वों से अपनी रक्षा कर सकते हैं। हमें अपने सङ्गठनकी आज सबसे अधिक आवश्यकता है।

या समझाना कि उसका अनुकरण करने का लोभ पैदा है, नामापराध है।

(३) श्रीशेशयोर्भेदधीः— विष्णु महादेव आदि देवताओं में भेद बुद्धि रखना उन्हें अलग अलग मानना। एक ही सर्वव्यापक सत्ता की विभिन्न शक्तियों के नाम ही देवता कहलाते हैं। वस्तुतः परमात्मा ही एक देव है। अनेक देवों के आस्तित्व के भ्रम में पड़ना-नाम जप करने वाले के लिये उचित नहीं।

(४) अश्रद्धा गुरु वचने—सद् गुरु, धर्मविद् तत्व दर्शी, निस्पृह, आप्तपुरुषों के सद् वचनों में अश्रद्धा रखना। विरोध न करते हुए भी उदासीन रहना अश्रद्धा कहलाती है। सद्गुरुओं के लोक हितकारी सद् वचनों में श्रद्धा रखनी चाहिये।

(५) अश्रद्धा शास्त्र वचने – शास्त्रके वचनों में अश्रद्धा रखना, यों तो कितनी ही पुस्तकें साम्प्रदायिक परस्पर विरोधी और असङ्गत बातों से भरी रहने पर भी शास्त्र कहलाती हैं पर वास्तविक शास्त्र वह है जो सत्यता, लोकहित, कर्तव्य परायणता और सदाचार का समर्थन करता हो। इस कसौटी पर जो ज्ञान खरे सोने के समान ठीक उतरता हो वह शास्त्र है। ऐसे शास्त्रों के वचनों पर अश्रद्धा नहीं करनी चाहिए।

(६) अश्रद्धा वेद वचने—अर्थात् वेद वाक्य में अश्रद्धा रखना। वेद-ज्ञान को कहते हैं। ज्ञान पूर्ण, विवेक पूर्ण, सद् बुद्धि सम्मत वचनों में अश्रद्धा नहीं करनी चाहिये। वेद, सत्य ज्ञान के आधार होने के कारण श्रद्धा करने योग्य हैं।

(७) नाम्न्यर्थवाद भ्रमः—नाम के अर्थ वाद में भ्रम करना। ईश्वर के अनेक नामों के अर्थ में जो भिन्नता है उसके कारण भ्रम में नहीं पड़ना चाहिये। गोपाल, मुरलीधर, यशोदानन्दन, राम, रघुनाथ, दीनबन्धु, अल्लाह, गौड आदि नामों के शब्दार्थ प्रथक प्रथक हैं। इन अर्थों से तत्व के अलग अलग होने का भ्रम होता है, यह ठीक नहीं। सब नाम उस एक परमात्मा के हैं। इसलिए परमात्मा के सम्बन्ध में किसी प्रथकता के भ्रम में नहीं पड़ना चाहिये।

(८) नामाऽस्तीति निषिद्धवृत्ति—नाम तो है ही फिर अन्य बातों की क्या जरूरत ऐसी निषिद्ध वृत्ति। ईश्वर का नाम उच्चारण करने मात्र से सब पाप कट जावेंगे, इसलिए पाप करने में कुछ हर्ज नहीं ऐसा कितने ही लोग सोचते हैं। दिन रात कुविचारों में और कुकर्मों में लगे रहते हैं, उनके फल से बचने का सहज नुसखा ढूँढते हैं कि दो चार बार रामनाम जबान में कह दिया बस बेड़ा पार हो गया। सारे पाप नष्ट होगये। यह भारी अज्ञान है। परमात्मा निष्पक्ष, सच्चा न्यायाधीश है। वह खुशामद करने वाले के न तो पाप माफ करता है और न बिना खुशामद करने वाले के पुण्यों को रद्द करता है। कर्मों का यथायोग्य फल देना उसका सुदृढ नियम है। इसलिए आत्म बल वृद्धि के लिये नाम स्मरण करते हुए भी यही आशा करनी चाहिए कि परमात्मा हमारे भले बुरे कर्मों का यथायोग्य फल अवश्य देगा। जो पापनाश की आशा लगाये बैठे रहते हैं और कुमार्ग को छोड़कर सन्मार्ग पर चलने का प्रयत्न नहीं करते वे नामापराध करते हैं।

(९) विहित त्याग—विहित कर्मों का त्याग, उत्तरदायित्व का छोड़ना, कर्तव्य धर्म से मुँह मोड़ना नामापराध है। कितने ही मनुष्य "संसार मिथ्या है, दुनियां झूठी है।" आदि महावाक्यों का सच्चा रहस्यमय अर्थ न समझकर अपने कर्तव्य धर्म एवं उत्तरदायित्व को छोड़कर घर से भाग जाते हैं, इधर उधर आवारागिर्दी में दुर्व्यसनियों के कुसङ्ग में मारे मारे फिरते हैं। यह अनुचित है। ईश्वर प्रदत्त उत्तरदायित्वों और कर्तव्य धर्मों को पूरी सावधानी और ईमानदारी से पूरा करते हुए भगवान का नाम स्मरण करना चाहिए।

(१०) धर्मान्तरैः साम्यम्—धर्म से इतर, धर्म विरुद्ध बातों को भी धर्म की समता में रखना। अनेक सामाजिक कुरीतियां ऐसी हैं जो धर्म विरुद्ध होते हुए भी धर्म में स्थान पाती हैं जैसे पशु बलि,

श्राद्ध का रहस्य ।

---

(२)

हिन्दू धर्म के कर्मकाण्डों में आधे से अधिक श्राद्ध तत्व भरा हुआ है । सूरज, चांद, ग्रह, नक्षत्र, पृथ्वी, अग्नि, जल कुआ, तालाब, नदी, मरघट, खेत खलिहान, भोजन, चक्की, चूल्हा, तलवार, कलम, जेवर, रुपया घड़ा, पुस्तक आदि निर्जीव पदार्थों की विवाह या अन्य संस्कारों में अथवा किन्हीं विशेष अवसरों पर पूजा होती है । यहां तक कि नाली या घूरे तक की पूजा होती है । तुलसी, पीपल, वट, आंवला आदि पेड़ पौधे तथा गौ, बैल, घोडा, हाथी आदि पशु पूजे जाते हैं । इन पूजाओं में उन जड़ पदार्थों या पशुओं को कोई लाभ नहीं होता, परन्तु पूजा करने वाले के मन में श्रद्धा एवं कृतज्ञता का भाव जरूर उदय होता है । जिन जड़ चेतन पदार्थों से हमें लाभ मिलता है उनके प्रति हमारी बुद्धि में उपकृत भाव होना चाहिये और उसे किसी न किसी रूप में प्रकट करना ही चाहिए । यह श्राद्ध ही तो है । मृतकों का ही नहीं, जीवितों, जानदारों और बेजानों का भी हम श्राद्ध करते हैं । ऐसे श्राद्ध के लिये हमारे शास्त्रों में पग पग पर आदेश है ।

मरे हुए व्यक्तियों को श्राद्ध कर्म से कुछ लाभ होता है कि नहीं ?' इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि—होता है, अवश्य होता है । संसार एक समुद्र के समान है जिसमें जल कणों की भांति हर एक जीव है । विश्व एक शिला है तो व्यक्ति उसका एक परमाणु । हर एक आत्मा जो जीवित या मृत रूप में इस विश्व में मौजूद है अन्य समस्त आत्माओं से सम्बद्ध है । संसार में कहीं भी अनीति, युद्ध, कष्ट, अनाचार, अत्याचार हो रहे हैं तो सुदूर देशों के निवासियों के मन में भी उद्वेग उत्पन्न होता है । जब जाडे का प्रवाह आता है तो हर चीज ठण्डी होने लगती है और गर्मी की ऋतु में हर चीज की उष्णता बढ जाती है, छोटा सा यज्ञ करने से उसकी दिव्यगन्ध तथा दिव्य भावना समस्त संसार के प्राणियों को लाभ पहुंचाती है । इसी प्रकार कृतज्ञता की भावना प्रकट करने के लिये किया हुआ श्राद्ध समस्त प्राणियों में शान्तिमयी सद्भावना की लहरें पहुँचाता है । यह सूक्ष्म भाव तरंगें सुगन्धित पुष्पों की सुगन्ध की तरह तृप्तिकारक आनन्द और उल्लासवर्धक होती है, सद्भावना की सुगन्ध जीवित और मृतक सभी को तृप्त करती है । इन सभी में अपने स्वर्गीय पितर भी आजाते हैं । उन्हें भी श्राद्धयज्ञ की दिव्य तरंगें आत्म शान्ति प्रदान करती हैं ।

मर जाने के उपरान्त जीव का अस्तित्व मिट नहीं जाता वह किसी न किसी रूप में इस संसार में ही रहता है । स्वर्ग, नरक निर्देह, गर्भ, सदेह आदि किसी न किसी अवस्था में इस लोक में ही बना रहता है । इसके प्रति दूसरों की सद्भावनाऐं

एवं स्त्री और शूद्रों के साथ होने वाले असमानता तथा अन्याय के व्यवहार धर्म के नाम पर प्रचलित हैं पर वास्तव में वे अधर्म हैं । ऐसे अधर्मो का धर्म में जोडना, धर्म की समता में रखना । नामापराध है । कर्तव्य कर्म ही धर्म कहलाते हैं । अकर्तव्यों को रूढिवाद के कारण धर्म साम्य नहीं बनाना चाहिए ।

इन दशाऋतों से शुद्ध होकर इन्हें त्याग कर, दसों इन्द्रियों को संयम में रखकर, सत्य और धर्म से जीवन को ओत प्रोत बनाते हुए जो लोग नाम जप करते हैं, भगवान का नामोच्चार करते हैं उन्हीं की आत्मा पवित्र होती है और वे ही कोटि यज्ञ फल के भागी होते हैं । वैसे तो तोते भी राम-राम रटते रहते हैं; इससे कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है ।

पाठकों को दशाऋत होकर नाम जप करना चाहिए । और याद रखना चाहिए कि:—

राम नाम सब कोई कहे, दशाऋत कहे न कोय,
एक बार दशाऋत कहे, कोटि यज्ञ फल होय ।

तथा दुर्भावनायें आसानी से पहुंचती रहती हैं। स्थूल वस्तुऐं एक स्थान से दूसरे स्थान तक देर में कठिनाई से पहुंचती हैं परन्तु सूक्ष्म तत्वों के संबंध में यह कठिनाई नहीं है उनका यहां से वहां आवागमन आसानी से हो जाता है। हवा गर्मी, प्रकाश, शब्द आदि को बहुत बडी दूरी पार करते हुये कुछ बिलम्ब नहीं लगता। विचार और भाव इससे भी सूक्ष्म हैं वे उस व्यक्ति के पास जा पहुँचते हैं जिसके लिऐ वे फेंके जाय। सताये हुये व्यक्तियों की आत्मा को जो क्लेश पहुँचाता है उसका शाप शब्द बेधी तीर या राकेट बम की तरह निश्चित स्थान पर जा पहुँचता है। सेवा, संतुष्ट, उपकृत, अहसानमंद, कष्ट उद्धरित व्यक्ति की सद्भावना दुआ, वरदान, आशीर्वाद, भी इसी प्रकार उपकारी व्यक्ति के पास पहुंचते हैं जिसने कोई परोपकार किया है। कोई व्यक्ति जीवित हो या मृतक उसके पास जहां कहीं भी वह रहे लोगों के शाप, वरदान पहुंचते हैं उसे मालूम हो पावे या न हो पावे वे शाप, वरदान उसे दुख या सुख देने वाले परिणाम उसके सामने उपस्थित करते रहते हैं। इसी प्रकार कृतज्ञता की श्रद्धा की भावना भी उस व्यक्ति के पास पहुंचती है जिसके लिए वह भेजी जाती है। फिर चाहे वह स्वर्गीय व्यक्ति किसी भी योनि या किसी भी अवस्था में क्यों न हो। श्राद्ध करने वाले का प्रेम, आत्मीयता कृतज्ञता की पुण्य युक्त सद्भावना उस पिता आत्मा के पास पहुंचती हैं, और उसे आकस्मिक, अनायास, अप्रत्याशित, सुख, शान्ति प्रसन्नता, स्वस्थता एवं बलिष्ठता प्रदान करती हैं। कई बार कई व्यक्तियों को आकस्मिक, अकारण आनन्द एवं संतोष का अनुभव होता है संभव है यह उनके पूर्व संबंधियों के श्राद्ध का ही फल हो

श्रद्धा—कृतज्ञता हमारे धार्मिक जीवन का मेरु दंड है। यह भाव निकल जाय तो धार्मिक समस्त क्रियाऐं व्यर्थ, नीरस एवं निष्प्रयोजन हो जायगीं श्रद्धा के अभाव में यज्ञ करना और भट्टी जलाना एक समान है। देव मूर्तियों और बालकों के खिलौनोंमें, शास्त्र श्रवण और कहानी कहने में, प्रवचनों और ग्रामोफोन के रिकार्डों में कोई अन्तर न रह जायगा। अश्रद्धा एक दावानल है जिसमें ईश्वर परलोक कर्मफल धर्म सदाचार दान, पुण्य परोपकार, प्रेम, एवं सेवा सहायता पर से विश्वास उठता है और अन्त में अश्रद्धालु व्यक्ति अपनी छाया पर, अपने आप पर भी अविश्वास करने लगता है। भौतिक वादी नास्तिक दृष्टिकोण और धार्मिक आस्तिक दृष्टिकोण में प्रधान अन्तर यही है। भौतिकवादी नीरस, शुष्क, कठोर दृष्टिकोण वाला व्यक्ति स्थूल व्यापार बुद्धि से सोचता है. वह कहता है पिता मर गया—अब उससे हमारा क्या रिश्ता—जहाँ होगा अपनी करनी भुगत रहा होगा उसके लिये परेशान होने से हमें क्या मतलब ? इसके विपरीत धार्मिक दृष्टि वाला व्यक्ति स्वर्गीय पिता के अपरिमित उपकारों का स्मरण करके कृतज्ञता के बोझ से नत मस्तक होजाता है, उस उपकार मयी स्नेह मयी देवोपम स्वर्गीय मूर्ति के निस्वार्थ प्रेम और त्याग का स्मरण करके उसका हृदय भर आता है। उसका हृदय पुकारता है 'स्वर्गीय पितृ देव तुम सशरीर यहां नहीं हो, पर कहीं न कहीं इस लोक में आपकी आत्मा मौजूद है। आपके ऋण भार से दवा हुआ मैं बालक आपके चरणों में श्रद्धा की अञ्जली चढाता हूं'। इस भावना से प्रेरित होकर वह बालक जल की एक अंजुली भर कर तर्पण करता है।

तर्पण का वह जल उस पितर के पास नहीं पहुंचा वहीं धरती में गिर कर विलीन होगया, यह सत्य है, यज्ञ में आहुति दी गई सामिग्री जल कर वहीं खाक हो गई वह भी सत्य है, पर यह असत्य है कि 'इस यज्ञ या तर्पण से किसी का कुछ लाभ नहीं हुआ।" धार्मिक कर्मकाण्ड स्वयं अपने आप में कोई बहुत बडा महत्व नहीं रखते, महत्व पूर्ण तो वे भावनाऐं हैं जो उन अनुष्ठानों के पीछे काम करती हैं। मनुष्य भावनाशील प्राणी है। दूषित तमोगुणी, नीच भावनाओं को ग्रहण करने से वह असुर, पिशाच, राक्षस एवं शैतान बनता है और ऊंची, सात्विक, पवित्र, धर्ममयी, भावनाऐं धारण

करके वह महापुरुष, ऋषि, देवता अवतार बन जाता है। यह भावनाऐं ही मनुष्य को सुखी,समृद्ध स्वस्थ, सम्पन्न, वैभवशाली, यशस्वी, पराक्रमी तथा महान बनाती हैं और इन भावनाओं के कारण ही दुखी, रोगी, दीन, दास, तिरष्कृत तथा तुच्छ हो जाता है। शारीरिक दृष्टि से लगभग सभी समान एक से ही होते हैं पर उनके बीच जो जमीन आसमान का अन्तर दिखाई पडता है यह भावनाओं का ही अन्तर है। धार्मिक दृष्टिकोण, सद्भावनाओं, सात्विक, परमार्थिक वृत्तियों को ऊँचा उठाता है, धार्मिक कर्मकाण्डों का आयोजन इसी आधार पर है। धर्म, हृदय का ज्ञान है। अन्तरात्मा में सतोगुणी तरलता उत्पन्न करना धर्म का धार्मिक कर्मकाण्डों का मूल प्रयोजन है। समस्त कर्मकाण्डों की रचना का यही आधार है। स्थूल व्यापार बुद्धि से धार्मिक कृत्यों और भावों की उपयोगिता किसी की समझ में आवे चाहे न आवे पर सूक्ष्म दृष्टि से उनका असाधारण महत्व है। इन कर्मकाण्डों में कुछ समय और धन अवश्य खर्च होता है पर उसके फलस्वरूप वे तत्व प्राप्त होते हैं जो मनुष्य के प्रेरणा केन्द्र का निर्माण करते हैं। उसके अन्तरंग तथा बहिरंग जीवन को सुख शान्ति से पूरित करते हैं।

ब्राह्मणत्व रहित, विद्या, विवेक, आचरण त्याग, तपस्या से रहित, वे व्यक्ति जो शूद्रोपम होते हुए भी वंश परम्परा के कारण ब्राह्मण कहलाते हैं, उन्हें श्राद्ध का, या अन्य किसी प्रकार दान प्राप्त करने का अधिकार नहीं है। श्राद्ध के निमित्त किया हुआ दान या भोजन उन्हीं सच्चे ब्राह्मणों को दिया जाना चाहिये जो वस्तुतः उसके अधिकारी हैं। श्रुतियों में कहा गया है कि ब्राह्मण अग्निमुख है उसमें डाला हुआ अन्न देवता एवं पितरों को प्राप्त होता है, उससे विश्व का कल्याण होता है परन्तु वे ब्राह्मण होने चाहिये अग्निमुख। त्याग, तपस्या, विद्या और विवेक की यज्ञ अग्नि जिनके अन्तःकरण में प्रज्वलित है वह ही अग्निमुख है। अग्नि में न डालकर कीचड में यदि हवन सामिग्री डाली जाय तो कुछ पुण्य न होगा, इसी प्रकार अग्निमुख ब्राह्मणों के अतिरिक्त अन्यों को दिया हुआ दान भी निरर्थक होता है। शास्त्र का मत है कि कुपात्रों को दिया हुआ दान दाता को नरक में ले जाता है।

श्राद्ध करना चाहिये जीवितों का भी, मृतकों का भी। जिन्होंने अपने साथ में किसी भी प्रकार की कोई भलाई की है उसे बार बार प्रकट करना चाहिये क्योंकि इससे उपकार करने वालों को संतोष तथा प्रोत्साहन प्राप्त होता है। वे अपने ऊपर अधिक प्रेम करते हैं और अधिक घनिष्ट बनते हैं, साथ साथ अहसान स्वीकार करने से अपनी नम्रता एवं मधुरता बढ़ती है। उपकारों का बदला चुकाने के लिये किसी न किसी रूप में सदा ही प्रयत्न करते रहना चाहिये जिससे अपने ऊपर रखा हुआ ऋण भार हलका हो। जो उपकारी, पूजनीय एवं आत्मीय पुरुष स्वर्ग सिधार गये हैं उनके प्रति भी हमें मन में कृतज्ञता रखनी चाहिये और समय २ पर उस कृतज्ञता को प्रकट भी करना चाहिए। जल की एक अंजली, दीपक या पुष्प से भी श्राद्ध किया जा सकता है। श्राद्ध में भावना ही प्रधान है। श्रद्धा भावना का हमें कभी परित्याग न करना चाहिये। श्रद्धा की परम्परा समाप्त हो जाने पर तो पिता को कैद कर लेने वाले शाहजहां ही चारों ओर दृष्टिगोचर होने लगेंगे।

जिन विश्वासों की प्रेरणा से मनुष्य सन्मार्ग की ओर अग्रसर होता है। उन विश्वासों की धारणा ही बुद्धिमानी है।

× × × ×

शस्त्र युद्ध में विजय प्राप्त करने की अपेक्षा आत्म जय करने में अधिक वीरता है।

× × × ×

दुनियां में बुराई की कालिमा अधिक है पर वह भलाई की उज्वलता से अधिक नहीं है। यदि यहाँ भलाई की अपेक्षा बुराई अधिक होती तो कोई भी प्राणी इस संसार में रहना पसन्द न करता।

× × × ×

पाप का प्रायश्चित—पश्चाताप है। पश्चाताप का अर्थ है—पाप की पुनरावृत्ति करना।

× × × ×

अपने स्वभाव तथा मनोवृत्ति का अध्ययन ।

(प्रोफेसर श्री रामचरण महेन्द्र एम० ए०)

यदि आप प्रसन्न मुख एवं आह्लादित रहते हैं, अलमस्त और आनन्दी स्वभाव के हैं, तो प्रतिघात और प्रतिकूलताओं को आप हँसते हँसते चुटकियों में उड़ा सकेंगे। आपके इष्ट मित्र आपको देख कर एक अजीब आकर्षण का अनुभव करेंगे। उत्साही मुद्रा आपके व्यक्तित्व का विशिष्ट अंग है। इसके विपरीत यदि आप प्रसन्न रहने के आदी नहीं हैं, खिन्न तथा उदास रहते हैं. तो इसका अभिप्राय यह है कि आप संसार की घटनाओं तथा अड़चनों से परास्त हो गए हैं। जीवन को भार स्वरूप समझ बैठे हैं, किसी प्रकार जीवन की गाड़ी खींच रहे हैं।

इस परिस्थिति से निकलने के लिए एक बार दिन भर की घटनाओं पर दृष्टि डालिये। आपको किस किस बात की फिक्र है? कौन कौन कार्य करने हैं? आपके क्या २ कर्तव्य हैं? साथ ही प्रतिकूलताओं से युद्ध करने के लिए आपके पास कौन २ साधन हैं। आपके कष्टों को अतिशयोक्ति पूर्ण दृष्टि से न देखिए साथ ही अपनी शक्तियों का मूल्य नीचा न आँकिये। यदि आपके पास जिम्मेदारी का बोझ है, तो साथ ही उसे उठाने की ताक़त भी आपके हाथ पांवों में मौजूद है। अपने उत्तरदायित्वों को बढ़ा २ कर न देखो। जो वास्तविक वस्तु स्थिति है, उसी पर दृष्टि एकाग्र करो।

यदि आप गंभीर चिन्तनशील प्रकृति के हैं, बात को समझ बूझ कर ही स्वीकार करते हैं, तो आपके इर्द गिर्द आने वाले सभी व्यक्ति आपसे सलाह मशवरा लेंगे। चिन्तनशील व्यक्ति श्रद्धा एव आदर के पात्र होते हैं। लेकिन गंभीरता की अति करना मूर्खता है। वृद्धि होकर गम्भीरता एवं चिंतन शुष्क निराशावादिता, दार्शनिकता, या (Melancholia) उदासी, विवाद तथा चिंताकुलता जैसे मानसिक रोगों में परिणित हो जाता है। मस्तिष्क के तन्तुओं का अत्यधिक तनाव बड़ा घातक है। इससे कभी २ प्रमाद तक हो सकता है।

यदि आप किसी भी वस्तु को गम्भीरता से नहीं देखते, यों ही हँसी हंसी में टाल देते हैं या बचा जाते हैं, तो आप में अभी तक बाल स्वभाव का आधिक्य है। आपका स्वभाव मजेदारी में लगा है। उसमें तितली जैसी चंचलता वर्तमान है। विकास का समय आते ही जहां जरा सा जोर पड़ा कि स्वभाव मचलने लगता है। यदि आप क्षुद्र चीजों पर मोहित होजाते हैं, बाजार में रंग विरंगी वस्तुओं को देखकर उन पर लट्टू होजाते हैं, तो अभी दीखने में बुड्ढे होते हुए भी अभी आप बच्चे ही हैं। जीवन को गम्भीरता से देखिये और अपने स्वभाव का परिष्कार कीजिए।

यदि आप में उत्साह की गर्मी है अपने नित्य प्रति के व्यवहार में उत्साह से कार्य करते हैं, अपने पेशे में दिलचस्पी लेते हैं, तो समझ लीजिए कि आप उन्नति के पथ पर चलरहे हैं किंतु यह स्मरण रक्खें कि कहीं यह जिन्द दिली समाप्त न हो जाय। यदि आप में उत्साह नहीं है तो इसका अभिप्राय यह है कि आपका दिल उस कार्य को करने को नहीं चाहता है। आत्मबल तथा इच्छा शक्तियां उत्साह के साथ साथ चलती हैं। वह कारण मालूम कीजिए जिसके कारण आप अपने कार्य में अरुचि दिखा रहे हैं दृढ़ता से मन को वश में कीजिए।

यदि आप में हास्य की वृत्ति है, तो उसे बाहर निकालिये। हँसी का जीवन में महत्व पूर्ण स्थान है। हास्य आकर्षक व्यक्तित्व का प्रमुख लक्षण है। अनेक जीवन-उलझनें हास्य की वृत्ति से हल हो जाती हैं। यदि आप में हास्य-वृत्ति नहीं तो उसे उत्पन्न कीजिए। हास्य न होने का एक कारण आन्तरिक भय है। इस हीनता की भावना का उन्मूलन कीजिए। यदि आप मजाक करते हैं तो गन्दे मजाक से सावधान रहिए। दूसरे का मजाक करने से पूर्व उनके मजाक का बुरा न मानने का प्रण कीजिये।

स्वास्थ्य और नैतिकता।

शारीरिक स्वास्थ्य का भी नैतिक और मानसिक उन्नति से घनिष्ट सम्बन्ध है। जिसका शरीर ठीक नहीं, उसकी नीति और मन भी बहुधा ठिकाने नहीं रहता। जिस पुरुष के अवयवों का ठीक प्रयोग नहीं होता, उसका शरीर रुग्ण और कमजोर बना रहता है और कुछ नहीं तो उस पुरुष को महा कष्ट होते हैं। कमजोर शरीर वाले में शारीरिक शक्ति कम रहती है और मानसिक शक्ति भी कम होजाती है। वह साहस से कार्य नहीं कर सकता। इसका प्रत्येक रोगी को अनुभव है। वह लोभ, क्रोध इत्यादि रिपुओं को भी नहीं दबा सकता। रोगी मनुष्य खाने पीने और भोग विलास की बातों में लालची होजाता है। मानसिक शक्ति कम होने के कारण वह इनसे जल्द दब जाता है और वह उनके आधीन होजाता है। यही बात बुद्धि की भी है। बुद्धि का विकास मस्तिष्क के विकाश पर अवलम्बित है। यदि शरीर ठीक नहीं होता तो मस्तिष्क भी ठीक नहीं होता, क्योंकि रुधिर संचारण सब जगह होता रहता है। यदि रुधिर की दशा ठीक नहीं तो मस्तिष्क किस प्रकार ठीक रह सकता है धीरे धीरे उसकी बुद्धि क्षीण होने लगती है, इसका भी पृत्येक रोगी को अनुभव है। बुढापे में स्मरण शक्ति कमजोर होती है इसका यही कारण है। शारीरिक क्षीणता पैदा होने से बुद्धि भी अवश्य क्षीण होजाती है। प्रत्येक वृद्ध पुरुष यही बात बतलाता है। इसलिए जिस किसी को अपने आपको क्षीण होने से बचाना है उसे मेहनत करने से न हिचकना चाहिए।

यदि आप आशावादी और आस्तिक हैं, तो आप सही मार्ग पर चलते रहेंगे। लेकिन आपका आशावाद भक्ति, प्रेम तथा सत्य के आधार पर निर्भर होना चाहिए।

यदि आप निराशावादी या नास्तिक हैं, तो बड़ी भूलकर रहे हैं। चिंता आपको जीते जी चिता में ढकेल सकती है। यदि आप जो कुछ आप कर सकते हैं, करते जारहे हैं तो फिर निराश होने की क्या आवश्यकता है? भविष्य पर निर्भर रहिए।

विजयी आध्यात्मिक रथ।

(प्रो० श्री गुणवन्तसिंह जी गूंदर खेड़ा)

राम रावण युद्ध के समय—रावण को सुन्दर सुदृढ रथ पर चढ़े हुए देख तथा श्री रामचन्द्र जी को नंगे पैर जमीन पर खड़े देखकर विभीषण के मन में संदेह हुआ कि इस प्रकार पदाति-रामजी रावण को कैसे जीतेंगे वह श्रीरामजी से बोला आप रथ हीन हैं सुदृढ रथारूढ रावण को कैसे जीतेंगे? तथा श्रीरामजी ने स्थूल काष्ठमय रथ की अपेक्षा आध्यात्मिक रथ को बताते हुए समझाया कि तात! प्रिय! ऐसा आध्यात्मिक रथ जिसके पास होता है उसी की निश्चित विजय होती है।

रावण रथी बिरथ रघुबीरा।
देखि बिभीषण भयउ अधीरा॥
सौरज धीरज तेहि रथ चाका।
सत्यशील दृढ़ ध्वजा पताका॥
बल विवेक दम परिहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे॥
ईश भजन सारथी सुजाना।
बिरती चर्म सन्तोष कृपाना॥
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा।
वर विग्यान कठिन कोदण्डा॥
अमल अचल मन त्रोण समाना।
सम जम नियम सिलीमुख नाना॥
कवच अभेद विप्र गुरु पूजा।
एहि सम विजय उपाय न दूजा॥
सखा धर्म मय असरथ जाकें।
जीतन कहँन कतहुँ रिपु ताकें॥

अर्थ—उस आध्यात्मिक रथ के पहिए, १ शौर्य २ धैर्य हैं, सत्य और शील मजबूत ध्वजा और पताका हैं। बल, विवेक, दम-इन्द्रियों का वश में होना, और परोपकार ये चार घोड़े हैं। क्षमा, दया-समता रूपी डोरियों से जुते हुए हैं। ईश्वर भजन ही चतुर सारथी है। वैराग्य ढाल है, सन्तोष-तलवार है। दान-फरसा है, बुद्धि प्रचण्ड शक्ति है। श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है। निर्मल और अचल शांत मन तरकस के समान हैं। यम नियम ही अनेक तीर हैं, इसके समान विजयका दूसरा उपाय नहीं है।

प्रेम का पुजारी।

कवीर ने प्रेमियों की दशा का वर्णन करते हुए कहा है।

प्रेम व्यथा तन में बसै, सब तन जर्जर होय।
राम वियोगी ना जिये, जिये तो बौरा होय॥

जिन्हें प्रेम की लगन है, जिनके मन में राम की लगन है, परमात्मा के साकार रूप संसार की सेवा की लगन है वे सच्चे प्रेमी अपने निजी स्वार्थों निजी आवश्यकताओं की ओर ध्यान न देकर जीवनोद्देश्य में तल्लीन होजाते हैं। इस तल्लीनता के कारण सांसारिक वैभवों और आरामों से वंचित होकर उसे जर्जरता सहन करनी पड़ती है। उसे मृत्यु तुल्य कष्ट सहने पड़ते हैं, मौत के मुंह में प्रवेश करना पड़ता है। संकुचित दृष्टि रखने वाले विषय भोगों में डूबी रहने वाली दुनियां की दृष्टि में वह बौरा-बावला बन जाता है। संसार के प्रायः सभी महापुरषों को कवीर की बताई हुई इस कसौटी पर चढकर अपने खरे खोटे की परीक्षा देनी पडी है।

राजा महेन्द्रप्रताप सच्चे अर्थों में प्रेम पुजारी हैं। जापान में युद्ध अपराधी के रूप में वे पकड़े गये थे। तब ऐसा प्रतीत होता था कि उन्हें स्वेच्छाचारी तलवार की धार पर प्राणों की आहुति देनी पड़ेगी, पर प्रभु को धन्यवाद वह घडी टल गई और प्रेम पुजारी राजा महेन्द्रप्रताप आज हम लोगों के बीच मौजूद हैं। समस्त देश में उनके आगमन से हार्दिक प्रसन्नता की लहर दौड गई, मथुरा वृन्दावन की जनता को तो उसी प्रकार हर्ष हुआ जैसा कि राम के बनवास से लौटने पर अयोध्या के वासियों को हुआ था।

राजा साहब की जन्मभूमि मथुरा से आठ कोस दूर मुडसान है। मुडसान नरेश राजा घनश्यामसिंह के घर आप १ दिसम्बर सन् १८८६ को पैदा हुए। ढाई वर्ष की आयु में हाथरस के राजा हरिनारायणसिंह ने आपको गोद ले लिया। राजा हरनारायणसिंह प्रायः वृन्दावन के अपने महल में ही समय व्यतीत करते थे, राजा साहब का रहना भी वहीं हुआ। जींद के राजा की बहिन से आपका विवाह सोलह वर्ष की आयु में होगया। राजा हरनारायणसिंह उन्हें सात वर्ष का ही छोडकर स्वर्ग सिधार गये थे। अतएव रियासत सरकारी प्रवन्ध में चली गई थी। बालिग होने पर रियासत का प्रबन्ध आपके हाथ में आगया। १८ वर्ष की आयु में रानी साहिबा सहित आपने योरोप के प्रायः सभी देशों का भ्रमण किया।

स्वतन्त्र देशों का वातावरण स्वतन्त्र होता है। जो देश आजादी की सांस लेते हैं उनमें जीवन होता है। राजनैतिक गुलामी के बन्धनों में जो लोग जकड़े रहते हैं उन्हें मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, दैहिक, दैविक, भौतिक सभी प्रकार के बधनों में बँधा रहने के लिए विवश होना पडता है। राजनैतिक स्वाधीनता के बिना किसी देश की जनता सुखी नहीं रह सकती इस सत्य का साक्षात्कार उन्हें योरोप की यात्रा में हुआ। भारत की जनता और योरोप की जनता की तुलना करने पर उनके हृदय को भारी आघात पहुँचा। यों सैर सपाटे के लिए राजा रईस विलायत जाते रहते हैं, और वहां ऐश करते गुलछर्रे उड़ाते और धन को पानी की तरह बहाते हैं। पर राजा महेन्द्रप्रताप दूसरी धातु के बने हुए थे, विदेशों की तुलना में भारत की दयनीय दुर्दशा देखकर उनका हृदय रो पडा।

योरोप की यात्रा से लौटकर राजासाहब ने नरनारायण के जनता जनार्दन के चरणों पर अपना आत्म समर्पण करने का सकल्प किया। सच्चा भक्त, सच्चा प्रेमी अपने आराध्यदेव के ऊपर सर्वस्व निछावर कर देता है, राजा साहब ने भक्तों की इस सनातन परम्परा को शिरोधार्य किया और अपना निजी जो कुछ था उसे निछावर कर दिया। अपने परिवार के खर्च के लिए थोडी सी जमीन बचाकर शेष सारा राजपाट, महल, तिवारे जनता के लाभ के लिए अर्पण कर दिए। वृन्दावन में प्रेम महाविद्यालय का स्थापन, पुत्र उत्पन्न की खुशी जैसा समारोह मनाते हुए की। महामना मालवीय जी ने इस अद्भुत पुत्र का नामकरण

संस्कार करते हुए प्रेम महाविद्यालय नाम रख दिया। इस विद्यालय के खर्चे के लिए राजा साहब ने अपनी जमीन जायदाद देदी। यह विद्यालय विगत ३८ वर्षो से कला कौशल की शिक्षा देकर उन्हें आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनाता है और उनके अन्दर ऐसे भाव भरता है जिससे वे देश सेवा में महत्वपूर्ण भाग लें। इस विद्यालय के विद्यार्थियों और कार्यकर्ताओं ने स्वाधीनता संग्राम को आगे बढ़ाने के लिए जो कार्य किया है वह स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य है।

राजा साहब बहुत काल तक विद्यालय का संचालन स्वयं अपने हाथों करते रहे और अन्य संगठन, अछूतोद्धार, राष्ट्रीय शिक्षा, स्वदेशी प्रचार, साम्प्रदायिक एकता आदि रचनात्मक कार्यों में बड़े उत्साह से जुटे रहे। अपने प्रेमी हृदय की पुकार प्रेम भरे शब्दों में सर्व साधारण तक पहुँचाने के लिए "प्रेम" नामक पाक्षिक पत्र निकाला। जिसमें सच्चे प्रेम की, वास्तविक ईश्वर भक्ति की लोक सेवा की आध्यात्मिक चर्चा रहती थी। भक्ति के आडम्बरी और पाखण्डी रूप से बचते हुए सच्ची प्रेम भावना का प्रचार करने के लिए उन्होंने एक 'प्रेम क्लब' भी कायम किया जिसके द्वारा महत्वपूर्ण कार्य हुए। देहरादून में 'निर्बल सेवक समाज' स्थापित की और 'निर्बल सेवक' पत्र निकाला।

उपयोगी ज्ञान एकत्रित करने के लिए सन् १९१२ में आप फिर योरोप की यात्रा करने गये। और एक वर्ष विभिन्न देशों का भ्रमण करके वापिस लौट आये।

सन् १९१४ का महायुद्ध शुरू होने पर देखा कि यह उचित अवसर है। जर्मनी की सहायता से भारत को स्वतन्त्र कराना चाहिए। इस निश्चय को कार्यान्वित करने के लिए वे बिना पासपोर्ट के ही जहाज द्वारा विलायत जाने में अपनी चतुरता के कारण सफल होगए। जर्मन सम्राट विलियम कैसर से वे मिले, कैसर ने उनके सहयोग का बड़ा आदर किया और भारत को स्वाधीन कराने में सहायता देने का वचन दिया। युद्ध के दौरान में राजा साहब बराबर अपनी उद्देश्य पूर्ति के लिए प्रयत्न करते रहे. पर घटनाचक्र अनुकूल न पड़ा। लड़ाई में जर्मनी हार गया। राजा साहब को भारत से निर्वासित होना पड़ा।

सन् १९१८ से लेकर दूसरा महायुद्ध शुरू होने तक राजा साहब संसार भर में भारत की स्वाधीनता के लिए प्रयत्न करते हुए फिरते रहे। पांच बार उन्होंने सारी पृथ्वी की परिक्रमा की। रूस में लेनिन तथा तथा ट्राटस्की से भारत की समस्याओं के बारे में गम्भीर मन्त्रणायें करते रहे। अफगानिस्तान के बादशाह अमानुल्ला आपके घने मित्र थे, उन्होंने राजाजी को आर्थिक सहायता तथा राजकीय सम्मान देने की कभी कमी न की। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें जिन्दा या मुर्दा पकड़ने के लिए समय समय पर कोशिशें कीं पर वह राजाजी की चतुरता के आगे सफल न हो सकी।

दूसरा महायुद्ध छिड़ने पर आपने आर्यन आर्मी की स्थापना की, आजाद हिन्द फौज के स्थापकों में आप हैं। पर जापान सरकार से मतभेद होने के कारण आपको जापान में नजरबन्द की तरह रहना पड़ा। टोकियो के पास गांव में वे आश्रम बनाकर रहते थे। उस आश्रम में मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा आदि थे और सभी धर्मों की प्रार्थना होती थी, वहीं से आप वर्ल्डफेडेरेशन' नामक एक अखबार निकालते थे। जापान की हार होने पर वे युद्ध अपराधी के रूप में पकड़े गये पर कांग्रेस और महात्मा गांधी के प्रयत्नों के कारण वे छूटकर भारत आगये और आज वे हमारे बीच में मौजूद हैं

राजा महेन्द्रप्रताप अब ६० वर्ष के होगये हैं, बाल पक गये हैं और शरीर ढीला पड़ गया है। पर अब भी उनमें नौजवानों का सा जोश और साहस मौजूद है। वे अब कांग्रेस के आदेशानुसार राष्ट्र सेवा में शेष जीवन को लगावेंगे। साम्प्रदायिक एकता आपका प्रिय विषय है। प्रेम से आपका अन्तःकरण लबालब भरा रहता है। ईश्वर की पवित्र प्रतिमा का भाव रखकर हर एक को वे प्रेम करते हैं। सब में आपसी प्रेम भाव बढ़े

पशुबलि—अपवित्र पूजा

दुर्गा-पूजा (नवरात्रि) का दिन हिन्दुओं का बहुत बड़ा पर्व माना जाता है। विशेष करके बंगाल बिहार, आसाम, उड़ीसा इत्यादि कई प्रान्तों में दुर्गा-पूजा का त्यौहार बड़े धूम धाम से मनाया जाता है। देवी भक्तगण अपने इस त्योहार में सब प्रकार के आनन्द प्राप्त करने के लिये खर्च करने की कमी नहीं रखते हैं। अपना मकान सजाते मण्डप बना कर शृङ्गार करते जिसमें दुर्गा माता की सुशोभित भव्य प्रतिमा की प्रतिष्ठा करके नाच रंग करवाते तथा मनाते हैं, अर्थात् मौज मजा में वृद्धि करने की कोशिश करने में अपनी शक्ति व्यय करते हैं। इतना आनन्द उत्सव होते हुये भी दुःख का विषय तो यह है कि इन दिनों में देवी-देवताओं के पवित्र मंडपों, और मन्दिरों में बकरे, मेंढ़ा, भैंसा, (देहातों में) सुअर, मुर्गी वगैरह लाचार गरीब निःसहाय मूक असंख्य प्राणियों के बलिदान निमित्ति क्रूरकी रीति से बध किया जाता है, जिससे उन पवित्र स्थानों में मल, मूत्र-रक्त इत्यादि गन्दी चीजों की धारा बहती है।

बलिदान एवं मांसाहार से जीव हत्या होती है धर्म के नाम पर अधर्म होता है। शारीरिक हानि अर्थात् रोगों की वृद्धि आर्थिक बर्बादी और देश की अवनति होती है। नितान्त दृष्टि से यदि देखा जाय तो यह प्रथा सर्वथा अनुचित है। कोई भी सहृदय व्यक्ति इसके औचित्य को स्वीकार नहीं कर सकता। पूजा तीन तरह की है सात्विकी, राजसी और तापसी। सात्विकी पूजा फल, फूल, मेवा, मिष्टान्न, घी, शक्कर, दूध, केला, गुड़ नारियल, खीर, तिल, दही वगैरह से की जाती है। और वही सर्वोत्तम है। फिर हम क्यों तामसी पूजा करें जिसके करने पर हमें प्रायश्चित करना पड़े। पहले कीचड़ में पैर लिपटा कर धोने की अपेक्षा कीचड़ में न घुसना ही अच्छा है।

भगवती दुर्गाको जब हम जगत-जननी और जगत रक्षिका मानते है और यह भी स्वीकार करते हैं कि छोटे प्राणी से लेकर बड़े तक उसको प्रिय संतान है। तो फिर क्या वे मूक पशु उसके सन्तान नहीं हैं जो हम उनका वध उनकी माता के समक्ष करें ? कोई भी माता अपने खोटे से खोटे से पुत्र को भी दुःखी देखना नहीं चाहती। वह नहीं चाहती चाहती कि किसी पुत्रका रक्तपात हो। देखा जाता है कि जिस माता के चार पुत्र होते हैं उन सबको वह एक दृष्टि से देखती है, फिर कोई कारण नहीं कि वह अपनी तृप्तिके लिये मूक पशुओं का रक्त मांगे। संसार में अपराधी को दण्ड दिया जाता है। पशु मूक निरपराध है। उन्होंने कभी झूठ नहीं बोला, चोरी नहीं की, किसी किस्म का कोई—अत्याचार नहीं किया। फिर क्या कारण है कि हम उस मूक निरपराध प्राणी की गरदन पर छुरी चलायें, और वह भी धर्म के नाम पर। जगत जननी के सामने पशु वध करना उस पवित्र मन्दिर को मल, मूत्र एवं रक्त से रंग कर अपवित्र करना हिन्दू धर्म के अहिंसा सिद्धान्त को और दुर्गा माता के नाम को कलंकित करना है। आश्चर्य तो यह है कि बलि करने वाले उसमें होने वाली हिंसाको भी "वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति" ऐसा कह कर

यही आपकी अभिलाषा रहती है। बन्दी शिविर में से छूट कर जब से आप भारत आये हैं तब से बिना एक दिन भी विश्राम किये देश भर में जगह जगह जाकर अपने विचारों का सन्देश पहुंचा रहे हैं।

राजा जनक की तरह राजा महेन्द्रप्रताप आदर्श कर्म योगी के रूप में हमारे सामने उपस्थित हैं वे गेरुए कपड़े नहीं पहनते तो भी सच्चे साधु हैं वे साम्प्रदायिक कर्म काण्डों से उदासीन रहते हैं वे सच्चे ईश्वर-भक्त हैं। वे जबान से नाम जप करने और पेट में गांठ रखने की अपेक्षा जीवन को सर्वतोभावेन जनता जनार्दन के ऊपर निछावर कर देने को सच्ची भक्ति समझते हैं। ऐसे आदर्श-भगवद् भक्तों के कारण ही यह भारत वसुन्धरा अपने को धन्य मानती है।

हिंसा नहीं मानते। यह कितनी दुर्बल उक्ति है। यह मनगढन्त केवल अपनी स्वार्थ साधना के लिये ही है। जो हिंसा है वह हिंसा ही है। आप कहेंगे कि वध करने से उस पशु को कोई दुःख नहीं होता। अगर ऐसा है तो वह क्यों रोता चिल्लाता है, क्यों तड़फड़ाता है और इससे बचने की कोशिश करता है? जैसे प्राण हमारे हैं वैसे उसके भी हैं अगर हमको जरा-सा कांटा लगने पर दुःख होता है, तो क्या उसे छुरी से काटने पर भी दुःख नहीं होता? अपितु अवश्य होता है।

कुछ मनुष्य कहते हैं कि बलि से प्राणी मर कर स्वर्ग को जाता है। यदि यह सत्य है तो अपनी ही बलि क्यों न की जाये। इससे अनायास ही स्वर्ग मिल जायगा और फिर नर-बलि और सिंह आदि की बलि न देकर क्यों उन मूक पशुओं की ही बलि दी जाती है। और दीन पशु तो आपसे यह भी नहीं कहता कि भाई मुझे स्वर्ग पहुँचा दो, मैं यहां पर दुःखी हूँ। किन्तु वह तो केवल घास वगरह खा कर ही अपने को सुखी मानता है।

स्वयं सहृदय व्यक्ति बलि के लिये लाये गये पशु की दयनीय अवस्था और दुःख का अनुमान कर सकते हैं। मन्दिर में पशु के हृदय विदारक आह और रक्तपात के कारण बहुत से दयालु दुर्गा के भक्त पुरुषों को मन्दिर में जाने का साहस नहीं होता। इसलिये प्रत्येक हिन्दू का परम कर्त्तव्य है कि मन्दिर को इतना पवित्र, शान्त और सुखद बनायें जिससे प्राणिमात्र उसके दर्शन कर अपने को धार्मिक और सुखी बना सकें।

पूज्यपाद महात्मा गांधी कलकत्ते की काली माता के मन्दिर में घातकी पशु-बलि प्रथा को देख कर कम्पित हो गये थे और आपने कहा था कि "काली माता के मन्दिर का पशु-बलिदान निमित्त भयभीत बकरों को भयभीत रीति से वध कर मांस खाते हैं यह बहुत शोचनीय है।' पशु बलि की अपवित्र प्रथा एक कलंक है। इससे हिंदू धर्म को शीघ्र ही मुक्त किया जाना चाहिए।

सांप काटे का इलाज।

(श्री रामनारायण शर्मा)

जिस समय किसी को सांप काटता है, उसका विष उसके दांतों से काटे हुए घावों में होकर मनुष्य के खून में प्रवेश करता है। यह विष समस्त देह में अत्यन्त शीघ्रता से संचरित होजाता है। इसका प्रभाव वैसा ही होता है, जैसे अफीम का। केवल अन्तर इतना ही है कि अफीम पेट और अन्तड़ियों द्वारा प्रविष्ट होने में समय लेता है और इलाज करने का मौका मिल जाता है।

सांप का विष बहुत शीघ्र असर करता है। इससे उसका इलाज उसी दम होना चाहिए। डाक्टर लोग प्रायः उसका इलाज इस प्रकार करने की सलाह देते हैं—

(१) जिस स्थान में सांप काटे उसके ठीक ऊपर रस्सी या पगड़ी या कपड़ा खूब कस कर बांध देना चाहिए। यदि स्थान ऐसा हो, जहां बांधना असम्भव हो तो हाथ ही से जोर से दबाये रखना चाहिए।

(२) सांप के दांतों से हुए जख्मों को चाकू से खूब चीर देना चाहिए और गरम लोहे से या मिट्टी का तेल डालकर जला देना चाहिए। यदि कहीं तेजाब सल्फुरिक एसिड स्ट्रांग अथवा नाइट्रिक एसिड स्ट्रांग मिल सके तो उनसे भी जलाना अच्छा है।

(३) स्ट्रीकनीन नाइट्रेट ग्रेन का दसवां हिस्सा चर्म के नीचे पिचकारी से डालना चाहिए। स्ट्रीकनीन नाइट्रेट कुचले का सत है, जो विशेष रासायनिक रीति से निकाला जाता है। गर्म और तेज कहवा या चाय भी घण्टे २ बाद भी दिया जाय अथवा एक एक चम्मच ब्रान्डी हर दूसरे तीसरे घंटे दी जाय तो बड़ा लाभ होता है।

(४) पोटाश आफपरमैंगनेट पांच या छः ग्रेन भर देना चाहिए।

(५) सांप के विष का प्रतिकार करने वाला एण्टीवेनैमस अर्क मिल सके तो चर्म के नीचे छोड़ देना चाहिए।

— —

चिर बन्धन या तलाक ?

(श्रीमती रत्नेश कुमारी जी नं राक्षना)

हम कौन थे ? क्या होगये हैं और क्या होंगे अभी ?
आओ. विचारें आज मिलकर. ये समस्यायें सभी ।।
—भारत भारती

उपनिषद में एक कथा वर्णित है कि प्रजापति ब्रह्मा से देवताओं तथा दानवों के सम्राट आत्मज्ञान का उपदेश लेने गये। सौ वर्ष तक अखण्ड ब्रह्मचर्य से रहने के पश्चात् दोनों को प्रजापति ने आज्ञा दी कि सुन्दर वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर देखो वही तुम्हारा आत्मा है। दानवेन्द्र को तो सन्तोष हो गया और दानवों में उन्होंने इसी देहात्मवाद का प्रचार किया, पर देवेश को संतोष न हुआ। दो बार और ब्रह्मचर्यादिक नियमों का सौ २ वर्ष तक पालन करके उन्होंने अपनी समस्त शङ्काओं का समाधान प्राप्त करके यथार्थ तत्व प्राप्त किया।

आत्म विवेचन करने के समय साधक के सामने अनेक भ्रम आते हैं, उनका खण्डन करने के पश्चात यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है क्या शरीर ही मैं हूँ ? क्या मन ही मैं हूँ ? क्या बुद्धि ही मैं हूँ ? अथवा इन तीनों की संयुक्तता ही मेरा अस्तित्व है ? ये ही समस्यायें देवेन्द्र के सन्मुख आयी थीं और उन्होंने बड़ी बुद्धिमत्तापूर्वक उनको सुलझाया। फिर यथार्थ ज्ञान प्रजापति से पाकर देवताओं में प्रचार किया। दैवी सभ्यता का यही यथार्थ ज्ञान हमारी आर्य संस्कृति का मूल तत्व है। किसी भी कार्य के ग्रहण अथवा त्याग की सदैव यही कसौटी रही है कि सर्व प्रथम तो ये देखे आत्मा की उन्नति अथवा कल्याण के लिये कितना लाभदायक है ? पश्चात बुद्धि तथा मन के लिये तत्पश्चात शरीर को।

आजकल अधिकतर भारतीयों के विचार आसुरी सभ्यता (देहात्मवाद) की ओर झुक रहे हैं। वे किसी भी कार्य को ग्रहण अथवा त्याग करते समय शारीरिक सुख पर प्रथम दृष्टिपात करते तथा प्रधान स्थान देते हैं। वैवाहिक सम्बन्ध को भी उसी मूल सिद्धान्त के अनुसार आर्य संस्कृति के मत से दो आत्माओं मन, बुद्धियों तथा शरीरों के एकत्व को विवाह मानते थे, पर आधुनिक काल में आत्मिक मिलन का क्रियात्मक अनुभव रखने वाले तो उंगलियों पर गिनने योग्य ही मिल सकेंगे। आजकल की विवाह की उत्तम परिभाषा यही समझी जाती है कि दो हृदय सदैव के लिये एक हो जायें।

पर पतन की ओर हमारा बढना रुका नहीं है जारी ही है। कुछ भारतीय लोग भारत में तलाक प्रथा लाने का प्रयत्न कर रहे हैं यह प्रथा हमें पूर्णतया पतन के गड्ढे में गिरा देगी, तब अन्य देशों के समान हमारे यहां भी यही विवाह की साधारण परिभाषा बन जायेगी कि मन की क्षणिक भाप हिलोरों में बहकर एक दूसरे पर कुछ दिनों के लिये ही क्यों न हो, मुग्ध हो जाना एक दूसरे के अधिकतर निकट रहने की लालसा ही विवाह रूपी महल की आधार शिला है।

देहात्मवाद रूपी दानव अपनी "तलाक बिल" रूपी भुजाओं को बढाये। हमारी चिरकालीन आर्य संस्कृति नष्ट करने को बढा आ रहा है, यदि हम सचेत न हुए, हमने अपने भूले हुए अमूल्य आदर्शों को न अपनाया, विवाह को तन, मन, आत्मा का चिर बन्धन न माना, अपने जीवन-साथी से अभिन्न सम्बन्ध न स्थापित कर सके तो हमारे गृह कुविचारों से नर्क (यातना केन्द्र) बन जायेंगे। यदि हमारे हृदय में अपने जीवन साथी के लिए अभिन्नता का भाव प्रेम, विश्वास, सद्-भावनायें सहनशक्ति तथा स्वार्थ त्याग की इच्छा है तो हमारा घर में दैवी भावनायें स्वर्ग बनाये बिना रह ही नहीं सकती है। इसके विपरीत आसुरी सम्पति के गुण हमारे तथा हमारे परिवार के व्यक्तियों के मन में असन्तोष, क्रोध, घृणा, ईर्षादिक नरकाग्नियों से जलाये बिना नहीं मानेंगे।

विष्णु पुराण में लिखा है, विशाल ब्रह्माण्ड के ही भांति प्रत्येक गृह में भी एक विष्णु (गृह

स्वामी) तथा एक लक्ष्मी (गृह स्वामिनी) होती है, वे ही उसमें सृष्टि (सन्तान) उत्पन्न करते हैं तथा पालन करते हैं और उस गृह के समस्त व्यक्ति के शासन, सुख, सुविधा आदिक गृह को व्यवस्थित रूप में चलाने वाले सभी कार्यों के उत्तरदायित्व का भार उन्हीं के ऊपर रहता है। कितनी सुन्दर भावना है. जहां लक्ष्मी और विष्णु निवास करते हैं वही स्थान तो स्वर्ग होता है , आइये हम पुनः एक बार इस भावना को अपने हृदय में बसायें।

ये भावना कितनी उपयोगिनी है । यदि कोई पति सच्चे हृदय से अपनी जीवन संगिनी को लक्ष्मी समझे तो क्या वह भूल कर भी दुर्व्यवहार या उपेक्षा कर सकेगा ? कोई पत्नी सम्पूर्ण हृदय से अपने चिरसंगी को यदि देवता माने तो स्वप्न में भी मन में दुर्भाव अथवा वाणी से वाक्य वाणों की निर्मम वर्षा अथवा कठोर व्यवहार रख सकेगी ? आप ही विचारिये इन सब दुखदायी कारणों के न होने पर क्या अपना गृह जीवन स्वर्ग नहीं बन जायेगा । एक बार गहराई से विचार कीजिये, दो में से क्या चुनेंगे ? तलाक या चिर बन्धन ? नर्क या स्वर्ग ?

लोग डरते तो हैं अपने आपसे, पर कहते हैं कि हम दूसरों से डरते हैं। भय एक मानसिक रोग है जो आत्मिक निर्बलता के कारण उत्पन्न होता है। डरपोक आदमी अपने अन्दर रहने वाली कायरता से डरता है, पर भूत, प्रेत, चोर या शमशेर को डर का कारण बताता है । झूठा आदमी ही दूसरों से डरता है, क्योंकि वह अपने झूठ से डरता है। जो सत्यनिष्ठ है वह सदा निर्भय है, उसे इस दुनियां में किसी से डरने की जरूरत नहीं होती।

× × ×

इस संसार में विजयी वे हैं जो नम्र हैं, सेवा भावी हैं, उदार हैं और मधुर स्वभाव के हैं। इस संसार में हार उनकी है जो अहंकारी हैं, लोभी हैं, स्वार्थी हैं और संकीर्ण भावों से घिरे हुए हैं।

× × ×

कर्म की स्वतन्त्रता

(पं० दीनानाथ भार्गव ' दिनेश ')

समस्त योनियों में से केवल मनुष्य योनि ही ऐसी योनि है जिसमें मनुष्य कर्म करने के लिये पूर्ण स्वतन्त्र है। ईश्वर की ओर से उसे मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आदि इस लिए प्रदान किये गये हैं कि वह प्रत्येक कर्म जो मानवता की कसौटी पर कसे और बुद्धि से तोल कर, मन से मनन करके, इन्द्रियों द्वारा पूरा करे। मनुष्य का यह अधिकार जन्म सिद्ध है। यदि वह अपने इस अधिकार का सदुपयोग नहीं करता तो वह केवल अपना कुछ खोता ही नहीं है, बल्कि ईश्वरीय आज्ञा की अवहेलना करने के कारण पाप का भागी बनता है।

कर्म करने में मनुष्य का अधिकार है, परन्तु इसके विपरीत कर्म को छोड़ देने में वह स्वतन्त्र नहीं है। किसी प्रकार भी कोई प्राणी कर्म किए बिना नहीं रह सकता। यह हो सकता है कि जो कर्म उसे नहीं करना चाहिए, उसका वह आचरण करने लगे। ऐसी अवस्था में स्वभाव उसे जबरदस्ती अपनी ओर खींचेगा और उसे लाचार होकर यन्त्र की भांति कर्म करना पड़ेगा।

लोग कहा करते हैं कि मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र नहीं है। कोई उसके हृदय-देश में बैठकर कर्म कराता है और अच्छा या बुरा जैसा भी मनुष्य से कराया जाता है, वह करता है यह केवल मिथ्या ज्ञान है, परन्तु उन लोगों के लिये सत्य है, जो अपना अधिकार खो देते हैं। गीता में जब भगवान अर्जुन को उपदेश दे चुके तब उन्होंने अन्त में कहा—

" यदि तू अज्ञान और मोह में पड़कर कर्म करने के अधिकार को कुचलेगा, तो याद रख कि स्वभाव से उत्पन्न कर्म के आधीन होकर तुझे सब कुछ करना पड़ेगा। ईश्वर सब प्राणियों के हृदय देश में बसा हुआ है और जो मनुष्य अपने स्वभाव तथा अधिकार के विपरीत कर्म करते हैं उनको यह भ्रम या का डण्डा लगाकर इस प्रकार घुमा देता है, जैसे कुम्हार चाक पर चढ़ाकर एक मिट्टी के बरतन को घुमाता है।'

सद्गुणों का संतुलन कीजिए

(श्री० दौलतरामजी कटरहा बी० ए० दमोह)

मानव जीवन अत्यन्त रहस्यमय है। महान से महान व्यक्तियों में जहां अनेक सद्गुण पाये जाते हैं वहां ढूंढने पर उनमें कुछ भद्दे दुर्गुण भी मिल जाते हैं। मनुष्य का जीवन ही ऐसा है कि जब वह कुछ सद्गुण प्राप्त करता है तो उसे कुछ दुर्गुण भी अनयास ही प्राप्त हो जाते हैं, जिनकी कि उसे कुछ खबर भी नहीं होती।

मान लीजिये एक व्यक्ति धन संचय करने में प्रयत्नशील है और वह अपना सारा समय धनार्जन में लगाता है। फल स्वरूप उसे विपुल धन-राशि की प्राप्ति होती है और तत्पश्चात् हमारे देखने में यह भी आता है कि धन के साथ उसे धन मद भी प्राप्त होजाता है जिसकी उसे खबर भी नहीं होती। उसी तरह राजाओं के पीछे राज-मद, विद्वानों के पीछे विद्या-मद, ज्ञानियों के पीछे ज्ञान-मद बलवानों के पीछे बल-मद, और कुलीनों के पीछे कुल-मद लग जाता है। जिसका सब जगह आदर सम्मान होता है, वह दूसरों को अपने से छोटा समझ बैठता है और यह स्वाभाविक भी है। जब क्लर्क न्यायाधीश को बड़ा समझता है तो न्यायाधीश के मुंशी को छोटा न समझना अत्यन्त कठिन होजाता है।

हमारे जीवन के व्यापार ही ऐसे हैं कि गुणों के साथ साथ चुपके चुपके दुर्गुण भी प्राप्त हो जाते हैं। अतएव जहां हम सद्गुणों का विकास करने के लिये सचेष्ट हों वहां हम उन सद्गुणों के साथ साथ उनके सहारे ही चुपचाप चोरों की नाईं घुस आने वाले दुर्गुणों की तरफ से असावधान, उदासीन तथा बेखबर भी न हों। जब हम ज्ञानार्जन अथवा द्रव्यार्जन कर रहे हों तब हम साथ ही साथ नम्रता का भी विकास करें, वैराग्य का भी विकास करें, अन्यथा वही धन हमारे पतन और हमारे नाश का कारण होगा।

महात्मा ईसा ने एक धनी सेठ को अपना सारा धन गरीबों को बांट देने का आदेश दिया था और कहा था कि तभी वह स्वर्ग के साम्राज्य में प्रवेश कर सकेगा। महात्मा ईसा आज होते तो सम्भव है यही आदेश आजकल के विद्वानों को भी देते। स्वतन्त्र विचारक कहलाने वाले और प्रत्येक सिद्धान्त के (भले ही वह बुद्धि के परे हो) तर्क रूपी कसौटी पर कसने वाले आजकल के उपाधिधारी विद्वान्, जब तक अपने विद्या रूपी धन का मोह नहीं छोड़ते जब तक उनका विद्याभिमान नहीं जाता तब तक उन्हें सत्य तत्व की प्राप्ति असम्भव है।

दूसरी बात जो ध्यान देने की है, वह यह है कि जब हम किसी गुण का विकास करें तब इस बात का ध्यान रखें कि वह गुण अज्ञान के संयोग से दोष की सीमा तक न पहुँच जावे, दोष न बन जावे, आसक्ति, बन्धन और मोह का कारण न होजावे। हमें चाहिये कि आत्म-विश्वास अपनी आत्म श्रद्धा को जाग्रत करें और अपनी शक्तियों और गुणों की श्रेष्ठता में विश्वास करें किन्तु हमें यह भी ध्यान रहे कि हमारा यह आत्म विश्वास अभिमान अथवा अहंकार का विकृत रूप न धारण करले। रावण, कर्ण और कौरवों का यह आत्म-विश्वास ही था जिसे हम आज अभिमान कहकर पुकारते हैं।

हमें स्मरण रखना चाहिए कि हमें मितव्ययी होना है, पर कंजूस नहीं। हम उदार हों पर अपव्ययी नहीं। हम सत्यवादी हों पर अप्रिय-भाषी नहीं। हम में प्रेम हो किन्तु मोह नहीं, आसक्ति नहीं। हम अपने कुटुम्बियों से प्रेम करें किन्तु साथ ही अनासक्त होने का भी प्रयत्न करें। हम उनके स्वास्थ्य की देख-भाल रखें किन्तु चिन्तित या दुखी न हों। हम में नम्रता और भक्ति हो किन्तु दासता नहीं। हमें चाहिये कि हम गुरु और वेद के वचनों में श्रद्धा रखें किन्तु साथ साथ हममें अन्धश्रद्धा भी तो न हो। हममें बौद्धिक स्वातन्त्र्य भी तो हो।

यूरोप में देश-भक्ति की लहर उठी, उसने मद-

प्रायः जातियों को जगा दिया, उनमें नव जीवन का संचार किया। किन्तु वह मर्यादित और संयत न न होने के कारण अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध का कारण हुई, जिसके फल स्वरूप हम दो भयंकर यूरोपीय महा-युद्धों को भी देख चुके हैं। हमें चाहिये कि हम अपने देश वासियों से प्रेम करें, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि हम अन्य देश वासियों से द्वेष करें। हम में विश्व-बन्धुत्व की भावना चाहिये।

हम अपने धर्म तथा धर्मावलम्बियों से प्रेम करें, उन्हें अच्छा समझें, किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि हम अन्य धर्मों तथा धर्मावलम्बियों से द्वेष करें, उन्हें हीन समझें। याद रखिये कि न तो आपको आत्म श्रेष्ठता (Superiority Complex) की ही भावनाएँ चैन लेने देंगी और न अमरत्व (inforiorty Complex) की भावनाएँ ही। आपको तो एक मध्यम मार्ग ही, अभिन्नता का मार्ग ही पकड़ना होगा। अतएव हमें सदा स्मरण रखना चाहिये कि जहां हम मन्दिरों को आदर की दृष्टि से देखें वहां हम मसजिदों और गिरजाघरों का भी अपमान न होने दें।

हम जहां अपने दृष्टिकोण को अच्छा समझते हैं, वहां हमें दूसरे व्यक्तियों के दृष्टिकोणों का भी सम्मान करना चाहिये। तभी हम में वास्तविक उदारता होगी। यह ठीक है कि हम मातृ भक्त हों, पितृ भक्त हों, किंतु इसका यह अर्थ न लगाया जावे कि हम दावा करें कि हमारे माता-पिता ही सर्व श्रेष्ठ हैं। यह तो फिर अन्ध-भक्ति होगी और और संघर्ष को जन्म देगी।

हमें मानसिक संतुलन के लिये समता की भी आवश्यकता है, किंतु समता तो तभी आवेगी जब राग द्वेष आदि द्वन्द्वों का अभाव होगा। कलकण्ठ से राग और कर्कश स्वर से द्वेष हमें जहां कोयल से प्रेम करावेगा वहां काक से द्वेष भी। हम राग द्वेष त्यागें और मानसिक संतुलन प्राप्त करें

आशावादी बनो !

(ले०-श्री० चम्पालाल कर्णावट भोपालगढ)

जिस पुरुष के सदृश होने की आप इच्छा करते हैं, उसका आदर्श बनालें और दिल में यह विचार करलें कि ' हम में कार्य करने की विलक्षण शक्ति है। उस आदर्श के प्रति हम दृढ श्रद्धा बनालें तथा इस विचार पर कायम रहें कि हमें अपनी मनो-वांछित वस्तु अवश्य ही प्राप्त होगी ।"

आप अपने मन में दुर्बलता के विचार न आने दें। कायरता का साम्राज्य न जमने दें। असफलता एवं पराजय के विचार अपने इस स्वच्छ सलिल हृदय में न घुसने दें। आप यह निश्चय रखें कि जिस सिद्धि के लिये हम वसुन्धरा पर आये हैं, वह प्राप्त करके ही जावेंगे। इससे इतर विचार यदि दिल में प्रवेश करें तो शीघ्र ही बाहर निकाल फेंकें। हमेशा वे ही विचार आने दें जिससे अपना हित हो। अहितकर भावों को देश निकाला दे दें।

अहा ! आशा में अद्भुत शक्ति है। यही हमें सफलता प्राप्त करने के लिए उकसाती रहती है। आशा ही सुख एवं शान्ति की खान है। कभी अपने मन में निराशाजनक भावों को स्थान न दो। निराशा मन को मलीन करती हुई कार्य करने की शक्ति को नष्ट करती है। अतः हमेशा ऐसा ही समझो कि हमारा कार्य अवश्य सफल होगा।

इसीलिये आशावादी बनो। इससे हमारे भावों में काफी परिवर्तन हो जायगा। हमारे जीवन की उन्नति में अपूर्व वृद्धि होगी। यदि हमारा मन साफ है और अपने उद्देश्य की ओर जा रहा है तो निश्चय समझो कि वह हजारों शत्रुओं पर भी अकेला विजय प्राप्त कर सकता है।

पाप का प्रायश्चित्य—पश्चात्ताप है, पश्चात्ताप का अर्थ है-पाप की पुनरावृत्ति न करना।

× × ×

मन को पवित्र बनाओ !

(लेखक—श्री स्वामी रामतीर्थ जी)

—※—※—※—

मन की शान्ति बढाओ। अपने मन को शुद्ध सात्विक विचारों से परिपूर्ण करो। याद रक्खो कि 'मन चङ्गा, तो कठौती में गङ्गा,' की कहावत के अनुसार मन को दृढ, एवं पवित्र बनाओ; फिर तुम भगवान को भी प्राप्त कर सकोगे। वेदान्त की शिक्षा है कि "दूसरों की इच्छाओं का या अपनी ही इच्छाओं का गलत इस्तैमाल न करो।" अगर तुम अपने मन की स्थिरता कायम रक्खो, तो वे सब इच्छायें, जो तुम्हारे मन में प्रकट हो रही हैं, काबू में आ जांयगी। यदि तुम उनके प्रति यथार्थ भाव रक्खो, तो बड़े ही विचित्र ढङ्ग से ठीक समय पर तुम्हें इसका अनुभव हो जायगा। अपनी इच्छाओं के प्रति भ्रांत-भाव रखने ही से तुम बने काम को बिगाड़ देते हो और अवांछनीय परिस्थितियों को उत्पन्न करते हो।

मन को पवित्र बनाने के मामूली साधन यह हैं—सुबह सूर्य निकलने से बहुत पहिले उठो, प्रातः शौचादि से निवृत्त होकर थोड़ी देर स्वच्छ वायु का अकेले सेवन करो। इससे तुम्हारा मन प्रफुल्लित होगा। शरीर में स्फूर्ति आयेगी। फिर दिन में ऐसे काम करो जिससे दूसरों को कष्ट न पहुँचे, दूसरों की स्त्रियों की ओर मत देखो, दूसरों का द्रव्य पाने की इच्छा न करो। भगवान के प्यारे भक्तों का आदर करो, उनकी बात ध्यान से सुनो व उन पर अमल करो। मन में भ्रांति न पैदा होने दो। सुख में हर्ष व दुख में क्लेश के भाव सावधानी से धीरज से न आने दो। दिन भर में कुछ समय अकेले रहो। सोचो कि तुमने दिन भर में किसी को सताया तो नहीं, पीडितों की सेवा की व आम तौर पर जन-हित का कौन काम किया ? रोज ऐसा सोचने से मन में बुरे विचार पैदा होना बन्द हो जांयगे और इस तरह तुम्हारा मन पवित्र व स्वच्छ हो जायगा।

किसी तरह की शंकाओं को मनमें जगह न दो। याद रक्खो कि शकायें मन को कमजोर करती हैं। हमेशा शंकित हृदय वाले अपने हर काम में असफल रहते हैं। भगवान पर भरोसा रक्खो। किसी काम को करने से पहिले उस पर खूब विचार कर लो। उस काम के करने का सही ढङ्ग सोचलो, फिर तर्क बुद्धि को छोड़कर दृढता से उसे करने में लग जाओ। तुम्हें अवश्य ही सफलता मिलेगी।

मन को इन्द्रियों का दास हरगिज न बनाओ। ऐसा अभ्यास करो कि इन्द्रियां ही मन की सेविका बनें। एकाग्रता का अभ्यास करो। एकान्त में मनन करने से ऐसा हो सकता है। हर चमकीली भडकीली चीज पर मन को न चलाओ। सादा वस्त्र पहिनो, सात्विक भोजन करो और कभी भी अश्लील पुस्तकें न पढो, न भद्दी तसवीरें ही देखो। प्राणायाम का अभ्यास भी उत्तम है। संसार के नाना प्रपंचों से बचो। आडम्बर से मन मोडो। सादा जीवन व्यतीत करो। इससे तुम्हारा मन पवित्र हो जायगा।

अच्छी, भगवद्भक्ति विषयक पुस्तकें पढा करो। वीरों के चरित्रों का अध्ययन करो। छल-छिद्र से बचो। अपने जीवन को नियमित बनाओ। मन को प्रसन्न व पुष्ट बनाओ। समय पर प्रत्येक काम करने की आदत डालो। जहां तक हो, बहुत कम बोलो। इन बातों से तुम्हारा मन जरूर पवित्र होगा।

दूसरों की बुराई कभी मत सोचो। मलिन-विचारों से मन दूषित हो जाता है। अतः सावधानी पूर्वक सदैव शुभ विचारों का ही मनन किया करो। 'आप भला तो जग भला' के अनुसार अपना मन साफ रक्खो, तुम्हें दुनियां का मन साफ दिखाई देगा। मन की पवित्रता परही मनुष्य का चरित्र निर्भर है। चरित्रवान बनो। नम्रता, शील, सत्य और साहस से मन पवित्र होता है।

'प्रेस फण्ड' के लिये स्वजनों की श्रद्धाञ्जलियां ।

जिनने अपने पसीने का पैसा देकर अखण्ड ज्योति की नाडियों में नया रक्त दिया है उन उदारमना पाठकों को शुभ नामावली ।

नवजीवन की इस पुण्य बेला में अखण्ड ज्योति अपने पाठकों से सहयोग की आशा करती है।
क्या आपका नाम इस सूची में है ? यदि नहीं है तो अपना तुलसी पत्र भेजने की व्यवस्था कीजिए।

१००) शाह हर्षचन्द भबुतमल जैन बागरा
१००) राजकुमारी रत्नेशकुमारी ललन, मैनपुरी स्टेट
५१) श्री पुरुषोत्तमदासजी मिमानी, सिरसा
५१) श्री रामजीदासजी मोदानी नरैना
५०) श्री नन्दकिशोरजी केडिया जलपाई गुडी
३७) श्री किशन केशरमल राठी, शोलापुर
३०) एक सद् गृहस्थ नांन्डोल
२५ श्री पतगं ब्रादर्स हैदराबाद
२५) शाह पुष्पराज सांकलचन्द जैन, बागरा
२५) शाह मूलचन्द रूपाजी जैन बागरा
२०) श्री प्रभूदयालजी राजगडिया लोहरदगा
१८॥) चौ० विश्वम्भरसिंहजी सुरजनपुर
१५) टा० अवसरसिंहजी ताल्लुकेदार, खंदबारा स्टेट
११) श्री मेघराजजी डागा, नवतारा
११) ला० आत्मारामजी माथुर वैश्य फीरोजाबाद
११) ला० सूरजभानजी सिरसा
११) ठेकेदार केशवसिंहजी, जोधपुर
११) श्री बाबूराम माधोराम सराफ शाहजहांपुर
११) श्री चम्पुलाल अग्रवाल. सब्क अर्जुनी
११) श्री रामदेवी रामनारायन रस्तोगी बम्बई
११) श्री रामदयालजी गुप्ता नौगढ
१०) श्री प्रभूदयालजी गुप्ता दांता
१०) ,, वी० एम० शारदा, शोलापुर
१०) कुँ० मनबोधनसिंह श्रीनगर
१०) श्रीमती मांजी साहिबा खगावतजी जुसारिया
१०) श्री खीमजी भानजी भावरा, रानीगंज
१०) ,, चिन्तामणिजी पाण्डेय, लखनऊ
१०) ,, मोतीलालजी रांका ब्यावर
१०) ,, चन्द्रभानजी आसिज रावलपिंडी
१०) ला० राधेश्याम श्यामसुन्दर हलवाई मलकपुर
१०) श्री दयाशंकरजी कूर्म क्षत्रिय, पारादान
१०) ,, सूरजभान गुप्ता हिसार
८) ,, राइला वैंकटेश्वर बारंगल
८) गुप्तदान चन्डावल टाउन, मारवाड
७) श्री एम० सी० गट्टानी शोभापुर
६॥) गुप्तदान श्री इन्द्रमल जैन बागरा द्वारा
६) श्री भोलानाथ विश्वम्भरनाथ पेण्डरा
६) पं० रामप्रकाश बाजपेयी मभगाँवा
५) ठा० गुलावसिंहजी जबलपुर
५) श्री भगवती प्रसादजी मुरेना
५) ,, देवकीनन्दन प्रसादजी रांची
५) ,, ओम प्रकाशजी गालव जीवाना
५) ,, अयोध्याप्रसादजी दीक्षित कानपुर
५) ,, रामसिंहजी नम्बरदार सफीपुर
५) श्री जगन्नाथ प्रसाद गर्ग छेवला गंगाराम
५) ,, इन्द्रमल खूमाजी जैन, बागरा
५) ,, मीठालाल बरदाजी जैन बागरा
५) ,, केशरीमल हुकमाजी जैन बागरा
५) ,, गोमाजी नरसिंहजी जैन बागरा
५) ,, पूनमचन्द लखमीचंदजी जैन बागरा
५) ,, हिमतमल चेनाजी जैन बागरा
५) ,, मोतीलाल कस्तूरजी जैन बागरा
५) ,, कौशल किशोर गुप्ता इलाहाबाद
५) ,, सुल्तानसिंहजी हैड क्लर्क कानपुर
५) ,, जानकीप्रसाद करन औरङ्गाबाद
५) ,, मानसिंह टाक जोधपुर
५) ,, मनोहरलाल मांगीलाल पाण्डेय मुरार
५) ,, काशीप्रसादजी अग्रवाल जमसेदपुर
५) ,, ए० नारायणजी जमसेदपुर
५) ,, डबल्यू० वी० आर नाइडू जमशेदपुर
५) डा० एल० एन० पचौरी, जबलपुर
५) श्री० स्वरूप नारायणजी साध बीजामऊ

५) श्री बालजी कानजी एण्ड सन्स कल्याणपुर
५) ,, रमेन्द्रनाथजी पंसारी नगीना
५) ,, छोंगालालजी अग्रवाल पाताल पानी
५) ,, आसाराम मास्टर बसेड़ा
५) ,, रघुनाथदास विजय भास्कर कोटा
५) ,, नागेन्द्रराव झाडे गद्वाल
५) ,, वैद्य लक्ष्मीनारायणजी बोरा उन्डो
५) ,, डी० पी० शर्मा सिकन्दराबाद
५) कविराज सुन्दरदासजी टांडा
५) श्री सोमाभाई मङ्गल भाई पटेल सेन्धवा
५) चौ० नाथूराम ओंकारजी राठौर अलीराजपुर
५) श्री भोलूशा रणछोर शा अलीराजपुर
५) ,, शान्तीलाल जैन कलकत्ता
५) ,, छज्जूमल अग्रवाल औरङ्गाबाद
५) ,, मोहनप्पा थिंगलैया मंगलौर
५) ,, शंकर मजूमदार मुरादाबाद
५) ,, विश्वनाथ दीक्षित बेतिया
५) ,, सत्यदेव राव अजमेर
४) ,, कृष्णचन्द्रजी श्रीवास्तव जज, मिर्जापुर
४) ,, धर्मपालसिंहजी कासिमपुर
४) ,, बी० एन० श्रीवास्तव पुरानी बस्ती
४) ,, गोरखसिंहजी गोण्डा
४) बा० प्रतापसिंहजी अजमेर
३) पं० राधेमोहनजी मिश्र बहराइच
३) श्री शिवनारायणजी गुप्त बहराइच
३) ,, सरेमलजी पूनमाजी जैन बागरा
३) ,, नथमल सांकलचन्द जैन बागरा
३) ,, उदयचन्द देवाजी जैन बागरा
३) ,, शिवराज हीमताजी जैन बागरा
३) ,, बालचन्द खूमाजी जैन बागरा
३) ,, जबानमल मैंजाजी जैन बागरा
३) ,, श्यामलालजी पेंशनर मोतिहारी
३) ,, फकीराम देवाङ्गन नगरी
३) ,, किशनलाल सतनारायन अम्बाजी पेठ
३) ,, यशोदानन्दनजी भार्गव गुडगांवा
३) ,, प्रह्लाददासजी गुडगांव
३) ,, गयादीनजी कूर्म क्षत्रिय सठिगँवा
३) पं० श्रीराम शर्मा हैड मुनीम फीरोजाबाद
३) सेठ नोनेलाल मझगवां
३) श्री कामताप्रसाद बानी मझगवां
२) ,, प्रेमनारायणजी पाण्डेय कानपुर
२) ,, जगन्नाथप्रसादसिंह भरथं
२) ,, ज्योतीप्रसाद श्रीकेशव पसारी नगीना
२) ,, चिरंजीलाल बाबूलाल चांयल सेन्धवा
२) ,, परमानंद रामानदजी नसरुल्लागंज
२) ,, तुकाराम भाई धनपतलाल मोरगांव अर्जुनी
२) ,, के० बी० किलेदार लश्कर
२) ,, के० बी० सुभाराव मानिकपुर
२) ,, हीरालाल शाह जबलपुर
२) सौ० सुशीला महिन्द्रकर हैदराबाद
२) श्री आदिरामजी राना बैनई
२) ,, शिवनारायण शर्मा आगरा
२) ,, वंशीधर भोलाराम नसरुल्लागंज
२) ,, डा० रामनरायन भटनागर इटौआधुरा
२) बा० दुलारेलालजी निगम कानपुर
२) श्री विशेश्वर प्रसाद मिश्र कानपुर
२) ,, कृष्णकान्त जोशी इंदौर
२) ,, ब्रजलालजी आय मण्डी आदमपुर
२) ,, रामनारायणजी दुबे कांकेर स्टेट
२) ,, राममूर्ति त्रिपाठी लखनऊ
२) ,, लक्ष्मीनारायण छोटेलाल मुरादाबाद
२) ,, हरीरामजी यादव सिहोरा
२) ,, सरस्वती प्रसादजी उरई
२) ,, भिखारीलालजी खुटार
२) ,, बच्चूलालजी खुटार
२) ,, छोटेलालजी ठेकेदार शाहजहांपुर
२) ,, गुणेश्वरजी मिश्र झझरापुर
२) ,, महावीरप्रसादसिंह त्यागी बीसलपुर
२) ,, रामप्रसाद शर्मा गार्ड पीपार रोड
२) ,, चुन्नीलालजी ओकास जबलपुर
२) ,, हरद्वारीलालजी मायापुर
२) ,, उखडू तुकाराम कमावत भ.तरखण्ड
२) ,, आर० डी० सिंह जबलपुर
२) ,, राम भरोसेजी कुरील कानपुर
२) ,, नरध्वजराय नेपाली नगरीसपुर
२) ,, फूलचंद भभूतमल जैन बागरा

२) श्री बसन्तीलाल बजीगर्जी जैन बागरा
२) ,, वापुलाल चन्दाजी जैन बागरा
२) ,, बसन्तलालजी सठिगवां
२) पं० मोतीलालजी सठिगवां
२) श्री गोकुलजी कूर्म क्षत्रिय सकट्ठनपुर
२) ,, वैद्यनाथ झा बैरागनिया
२) ,, तनुकलाल शाह बैरागनिया
२) ,, महावीरदास अग्रवाल बैरागनियां
२) ,, बा० शुकदेवप्रसाद पाठक कानपुर
२) ,, बा० राम सनेही जी कानपुर
२) श्री बी० के वार्ष्णेय, लश्कर
२) ,, चरणदत्तजी अवस्थी मान्टगुमरी
२) ,, लक्ष्मनदासजी मान्टगुमरी
२) ,, शान्तिस्वरूप शर्मा कोटपुतली
२) बा० हरस्वरूपजी अजमेर
१।।-) श्री मिश्रीमल नरसिंह जैन बागरा
१।) पं० राधानाथ चौबे हाथपोखर
१।) श्री निर्मलचन्द्र बनर्जी कानपुर
१।-) श्री जागीदत्त बंसवाल पहाड़ापुर
१।) श्री तीकमचन्द केशाजी जैन बागरा
१।) ,, इन्द्रमल भगवान जैन बागरा
१।) ,, कपूरजी नरसिंह जैन बागरा
१।) ,, भवूतमल कस्तूरजी जैन बागरा
१।) ,, लादाजी गुलाबजी जैन बागरा
१।) ,, पुखराज बेंजाजी जैन बागरा
१।) ,, चन्दनमल जेठाजी जैन बागरा
१।) ,, रायचन्द्र उकाजी जैन बागरा
१।) ,, लखमीचन्द प्रतापजी जैन बागरा
१।) ,, देवीदत्त पूनमाजी जैन बागरा
१।) ,, बाबूलाल धूडाजी जैन बागरा
१।) ,, फूलचन्द डाहाजी जैन बागरा
१।) ,, नथमल हीमाजी जैन बागरा
१।) ,, शुकराज सूरतीगजी जैन बागरा
१।) ,, शान्तीलाल पदमाजी जैन बागरा
१।) ,, बाबूलाल असलाजी जैन आकोलो
१।) ,, भीसदेव वर्मा बहराइच
१।) ,, बद्री प्रसादजी बहराइच
१) कुं० देशराजसिंहजी रावतपुर

१) श्री गोपीलाल राधाकृष्णजी कोटा
१) ला० उमा चरनजी इटौआधुरा
१) श्री रामचन्द्रजी गुडगांवा
१) ,, राधेलालजी गुडगांवा
१) बा० विश्वम्भरसिंहजी कानपुर
१) बा० शिव सुमिरनलालजी कानपुर
१) बा० गौरीशंकरजी औरङ्गाबाद
१) मु० जगेसर प्रसादजी औरङ्गाबाद
१) बा० महावीर प्रसाद औरङ्गाबाद
१) श्री श्रीरामजी चौबे जबलपुर
१) ,, महावीर शाह बलभद्रशाह रोहिनी
१) ,, राधाकृष्णजी खेरी
१) ,, मोहनलालजी अजमेर
१) ,, हृदयनारायणजी भक्त कटनी
१) ,, रामसमुझ मिश्र इच्छापुर
१) ,, रामकिशुनजी इच्छापुर
१) ,, सन्तराम वर्मा इलाहाबाद
१) ,, शिवदुलारेलालजी लखनऊ
१) पं० श्यामलाल शर्मा नरसेना
१) ,, मातादयालजी तुनहड
१) ठा० बरनामसिंहजी मास्टर तुनहड
१) श्री भागीरथ सिंह तिरोदिया तुनहड
१) ,, रामनारायणजी हृदयस्थ तुनहड
१) पं० एस० एस० शास्त्री पावांजी
१) श्री गुलफामसिंह प्रेम काशीपुर
१) ,, कृष्णमोहन दीक्षित तौरा
१) ,, ताराचंद पचौरी राजनांद गांव
१) पं० रामसनेही शर्मा गागेरी
१) श्री चन्द्रमोहन लागुरी चाईबासा
१) ,, गयाप्रसाद चौबे मास्टर खापर खेडा
१) ,, मोहन गोसांई टेलर राजनांद गांव
१) बा० रामचन्द्रजी पिडवा जोधपुर
१) पं० केशवप्रसाद वैद्य जोधपुर
१) बा० पन्नालाल पँवार जोधपुर
१) श्री चतुरी कूर्म क्षत्रिय सठिगांवा
१) बा० राजकिशोरजी कानपुर
१) ,, नारायनसिंहजी अजमेर
१) श्री हृदयनारायणजी बहराइच

आत्म-विश्वास

(रचयिता—श्री० रजेश)

—※-※-※—

कैसे निज पथ से विचलित कर सकता है संसार मुझे ?

जब पीड़ित माताएं निज आंखों से नीर बहाती हों।
अबलाएं रोटी के बदले में सम्मान लुटाती हों॥
जब कि भूख से होनहार बच्चों की जानें जाती हों।
जब लाखों परिवारों की आवाजें मुझे बुलाती हों॥
तब कैसे बन्दी रख सकता है कोई परिवार मुझे ?
कैसे निज पथ से विचलित कर सकता है संसार मुझे ?

मैंने सुखी कहाने वालों को भी कर मलते देखा।
पथ के दावेदारों को भी नई राह चलते देखा॥
अवसर पर दृढ चट्टानों को भी पल में गलते देखा।
मैंने कोमल कलियों को अंगारों पर जलते देखा॥
कैसे आकर्षित कर लेगा फिर क्षण-भंगुर प्यार मुझे ?
कैसे निज पथ से विचलित कर सकता है संसार मुझे ?

जिसमें जलकर खण्डहरों पर महलों का निर्माण हुआ।
जीवन हीन जगत में फिर से संचारित नव-प्राण हुआ॥
जिसमें जलकर दानवता से मानवता का त्राण हुआ।
जिसमें जलकर सृष्टि हुई, संघर्ष हुआ, कल्याण हुआ॥
उस चिनगारी से बचकर चलने का क्या अधिकार मुझे ?
कैसे निज पथ से विचलित कर सकता है संसार मुझे ?

दुनियां मुझको ठुकरा देगी तो एकाकी रह लूंगा।
अपने उर की व्यथा गगन से, दीवारों से कह लूंगा॥
सब अन्यायों, अपमानों को हँसते-हँसते सह लूंगा।
मृत्यु अचानक आ जाएगी तो भी तनिक न दहलूंगा॥
बाधाएँ सब कुछ सहने को कर लेंगी तैयार मुझे।
कैसे निज पथ से विचलित कर सकता है संसार मुझे ?

—o—